सूरतुल अन्फ़ाल

तम्हीदी कलिमात

सूरतुल अन्फ़ाल मदनी सूरत है और इसका सूरतुत्तौबा (मदनी) के साथ जोड़ा होने का ताल्लुक़ है। इस ग्रुप की चारों सूरतों में मायनवी रब्त यूँ है कि पहली दो मक्की सूरतों (अल अनआम और अल आराफ़) में मुशरिकीने अरब पर रसूल अल्लाह ﷺ की मुसलसल दावत के ज़रिये इत्मामे हुज्जत हुआ, और बाद की दो मदनी सूरतों (अल अन्फ़ाल और अल तौबा) में उस इत्मामे हुज्जत के जवाब में उन लोगों पर अज़ाब का तज़किरा है। मौज़ू की इस मुनासबत की बिना पर ये चारों सूरतें दो-दो के दो जोड़ों के साथ एक ग्रुप बनाती हैं।

सूरतुल अन्फ़ाल गज़वा-ए-बदर के मुत्तसलन बाद और सूरह आले इमरान के अक्सर हिस्से से पहले नाज़िल हुई। चुनाँचे इस सूरत के मुताअले से पहले गज़वा-ए-बदर के पसमंज़र के बारे में जानना बहुत ज़रूरी है। और इस पसमंज़र के मुताअले से भी पहले नबी अकरम ﷺ की दावती व इन्क़लाबी तहरीक के मनहज व मराहिल के हवाले से गज़वा-ए-बदर की ख़ुसूसी अहमियत और हैसियत का तअय्युन भी ज़रूरी है। चुनाँचे जब हम गज़वा-ए-बदर को क़ुरान के फ़लसफ़ा-ए-तज़किर बिअय्यामिल्लाह और सूरतुल अन्फ़ाल के ख़ुसूसी तनाज़र में देखते हैं तो इसके मंदरजाज़ेल (निम्नलिखित) दो बहुत अहम पहलु हमारे सामने आते हैं:

1) मुशरिकीने मक्का पर अज़ाब का पहला कौड़ा: अल्लाह तआला की सुन्नत के मुताबिक़ रसूलों का इन्कार करने वाली अक़वाम पर इज्तमाई तौर पर अज़ाबे इस्तेसाल नाज़िल होता रहा है। इसी क़ानूने क़ुदरत का इतलाक़ हिजरत के बाद मुशरिकीने मक्का पर भी होने वाला था। नबी अकरम ﷺ ने बारह-तेरह बरस तक मुख्तलिफ़ अंदाज़ में दावत देकर अपनी क़ौम पर इत्मामे हुज्जत कर दिया था। इसके बाद आप ﷺ के लिये हिजरत का हुक्म गोया एक वाज़ेह इशारा था कि मुशरिकीने मक्का अपने मुसलसल इन्कार के बाइस अब अज़ाब के मुस्तहिक़ हो चुके हैं, लेकिन हिकमते इलाही के पेशेनज़र क़ुरैश का मामला अपनी नौइयत में इस लिहाज़ से मुनफ़रिद रहा कि उन पर अज़ाब एक बारगी टूट पड़ने की बजाय क़िस्तों में नाज़िल हुआ। लिहाज़ा इस अज़ाब की क़िस्त अव्वल उन पर बदर के मैदान में नाज़िल हुई। उन्हें हरमे मक्का से निकाल कर मैदाने बदर में बिल्कुल इसी तरह से लाया गया जैसे आले फ़िरऔन को उनके महलात से निकाला गया था और समंदर में लाकर ग़र्क़ कर दिया गया था।

मैदाने बदर में क़ुरैश के सत्तर सरदार मारे गए, सत्तर अफ़राद क़ैदी बने और मुतअद्दिद ज़ख़्मी हुए। यह अंजाम उन जंगजुओं का हुआ जो फने हर्ब (जंग) की महारत और बहादुरी में पूरे अरब में मशहूर थे, अपने दौर के जदीद तरीन अस्लाह से लैस और तादाद में अपने हरीफ़ लश्कर से तीन गुना थे। उनके मुक़ाबले में मुसलमानों की बे-सरो-सामानी का आलम यह था कि तीन सौ तेरह में से सिर्फ़ आठ अफ़राद के पास तलवारें थीं। इन निहत्थे तीन सौ तेरह मुजाहिदीन के हाथों एक हज़ार के मुस्ल्लाह लश्कर की यह ज़िल्लत और हज़ीमत दर असल क़ुरैशे मक्का के लिये अज़ाबे इलाही की पहली क़िस्त थी, जिसका ज़िक्र सूरतुल अन्फ़ाल में हुआ है। (इस अज़ाब का आख़री मरहला सन 9 हिजरी में आया, जिसका ज़िक्र सूरतुत्तौबा में है।)

2) गलबा-ए-दीन की जद्दो-जहद का हतमी और नागुज़ीर मरहला (इक़दाम): गज़वा-ए-बदर रसूल अल्लाह ﷺ की गलबा-ए-दीन की जद्दो जहद के पाँचवें और आख़री मरहले यानि हक़ व बातिल के दरमियान बाक़ायदा तसादुम का नुक़्ता-ए-आग़ाज़ था और इस मरहले को सर करने के बाद यह तहरीक बिल आख़िर तारीखे इंसानी के अज़ीम तरीन और जामेअ तरीन इन्क़लाब पर मुन्तज (समापन) हुई। इस तहरीक के इब्तदाई चार मराहिल यानि दावत, तंज़ीम, तरबियत और सबरे महज़ तो मक्का मुकर्रमा में तय हो गए थे। इस सिलसिले के चौथे मरहले (सबरे महज़) का तज़किरा सूरतुन्निसा की आयत 77 में (कुफ्फ़ू अय्दियाकुम) के अल्फ़ाज़ में किया गया है कि अपने हाथ बाँध कर रखो, यानि तुम्हारे टुकड़े भी कर

दिये जायें तो भी तुम्हें हाथ उठाने की इजाज़त नहीं है, हत्ता के मदाफ़आना कार्यवाही की भी इजाज़त नहीं है।

इन चार मराहिल को कामयाबी से तय करने का नतीजा था कि नबी अकरम ﷺ के पास जाँनिसारों की एक मुख़्तसर मगर इन्तहाई मज़बूत जमाअत तैयार हो गई थी, जो सर्द व गरम चशीदा थे, हर तरह की सख्तियाँ झेल चुके थे, हर क़िस्म की क़ुर्बानियाँ दे चुके थे और उनके इख्लास मअ अल्लाह (अल्लाह के साथ ईमानदारी) में किसी क़िस्म के शक व शुबह की गुन्जाइश नहीं थी। इस तरबियत याफ्ता, मुनज्ज़म और मज़बूत जमाअत की तैयारी के बाद अब बातिल को ललकारने का वक़्त क़रीब आ चुका था। लिहाज़ा मदीने की तरफ़ एक खिड़की खोल कर दारुल हिजरत का इंतेज़ाम कर दिया गया, ताकि यह सारी क़ुव्वत एक जगह मुजतमाअ (इकट्ठी) होकर आख़री मरहले (इक़दाम) के लिये तैयारी कर सके और यही वजह थी कि यह हिजरत तमाम अहले ईमान पर फ़र्ज़ कर दी गई थी। इस पसमंज़र में अगर देखा जाये तो यह हिजरत फ़रार (flight) नहीं थी, जैसा कि मगरबी मौरखीन (western historian) इसे यह नाम देते हैं, बल्कि बाक़ायदा एक सोची-समझी, तयशुदा हिकमते अमली थी, जिसके तहत इस तहरीक के हेडक्वार्टर्ज़ को मुतबादल base की तलाश में मक्का से मदीना मुन्तक़िल किया गया, ताकि वहाँ से फ़ैसलाकुन अंदाज़ में इक़दाम किया जा सके। (तफ़सील के लिये मुलाहिज़ा हो इस मौज़ू पर मेरी किताब "मन्हजे इन्क़लाबे नबवी ﷺ")।

यहाँ पर एक बहुत अहम नुक्ता वज़ाहत तलब है और वह यह कि अट्ठारहवीं सदी में मगरबी उलूम व तहज़ीब की शदीद यलगार के सामने मुसलमान हर मैदान में पसपा होते चले गए, चुनाँचे जब मगरिब की तरफ़ से यह इल्ज़ाम लगाया गया कि *"बू-ए-ख़ूँ आती है इस क़ौम के अफ़सानों से!"* यानि यह कि इस्लाम तलवार के ज़ोर से फैला है तो इसके जवाब में हमारे कुछ बुज़ुर्गों की तरफ़ से पूरे ख़ुलूस के साथ मअज़रत ख्वाहाना अंदाज़ इख्तियार किया गया। शायद यह उस वक़्त के हालात की वजह से मजबूरी भी थी। ये वह ज़माना था जब बर्रे सगीर में महकूमी व गुलामी की हालत में मुसलमान ख़ुसूसी तौर पर अंग्रेज़ों के ज़ुल्मो सितम का निशाना बन रहे थे। इन हालात में कुछ मुसलमान रहनुमा एक तरफ़ अपनी क़ौम के तहफ्फ़ुज़ के बारे में फ़िक्रमंद थे तो दूसरी तरफ़ वह इस्लाम और सीरतुन्नबी ﷺ का दिफ़ा (बचाव) भी करना चाहते थे। चुनाँचे इस इल्ज़ाम के जवाब में यह मौक़फ़ इख्तियार किया गया कि नबी अकरम ﷺ ने खुद से कोई ऐसा जारहाना (आक्रामक) इक़दाम नहीं किया, बल्कि तमाम जंगे आप ﷺ पर मुस्सलत की गई थीं और आप ﷺ ने तमाम जंगें अपने दिफ़ा में लड़ीं।

हिन्दुस्तान में इन ख़ुतूत पर सबसे ज़्यादा काम अल्लामा शिबली नौमानी रहि. ने किया है। वह सर सय्यद अहमद खान के ज़ेरे असर थे और ये सब लोग मिल कर जदीद मगरबी इफ़कार व ख्यालात, तहज़ीब व तमद्दुन और इक़दार व नज़रियात के तूफ़ान का ख़ुलूसे नीयत से मुक़ाबला कर रहे थे, जो बरहाल कोई आसान काम नहीं था। लिहाज़ा इस सिलसिले में उन्हें मअज़रत ख्वाहाना (apologetic) अंदाज़ इख्तियार करना पड़ा। यही वजह है कि अल्लामा शिबली रहि. ने "सीरतुन्नबी ﷺ" तहरीर करते हुए गज़वा-ए-बदर से पहले की आठ मुहिम्मात (जिनमें चार गज़वात और चार सराया थीं) को तक़रीबन नज़रअंदाज़ कर दिया है, ताकि यह साबित ना हो कि पहल का इक़दाम (initiative) हुज़ूर अकरम ﷺ की तरफ़ से हुआ था।

मज़कूरा मसलिहत आमेज़ हिकमते अमली एक ख़ास दौर का तक़ाज़ा थी, लेकिन अब हालात मुख्तलिफ़ हैं। आज इस्लाम का यह फ़िक्र व फ़लसफ़ा पूरी वज़ाहत के साथ दुनिया के सामने लाने की ज़रूरत है कि इस्लाम एक मुकम्मल दीन है जो इन्सानी मआशरे में अमली तन्फ़ीज़ के लिये अपना ग़लबा चाहता है और हुज़ूर ﷺ का मक़सदे बेअसत ही दीन को ग़ालिब करना था। इसी तरह दीन को ग़ालिब करने की इस इन्क़लाबी जद्दो जहद की आज भी ज़रूरत है। यह जद्दो जहद जब भी और जहाँ भी शुरू की जायेगी इसके लिये मुनज्ज़म अंदाज़ में तैयारी की ज़रूरत होगी। और जैसा कि पहले ज़िक्र हो चुका है, सीरते मुताहराह की रोशनी में तैयारी का यह कठिन सफ़र बतदरीज पाँच मराहिल तय करता हुआ नज़र आता है, यानि दावत, तंज़ीम, तरबियत, सबरे महज़ और इक़दाम। अगर पहले

चार मराहिल कामयाबी से तय कर लिये जाएँ तो उसके बाद यह जद्दो जहद आखरी और फ़ैसलाकुन मरहले में दाखिल हो जाती है जिसमें बातिल को ललकार कर उससे टक्कर ली जाती है। इसकी मन्तक़ी (लॉजिकल) वजह यह है कि हक़ और बातिल दो ऐसी मुतज़ाद (विरोधी) और मुतहारिब (उग्रवादी) क़ुव्वतें हैं जो मुतवाज़ी (समानान्तर) अंदाज़ में नहीं चल सकतीं। दोनों में बक़ा-ए-बाहमी (co-existence) के उसूल पर मफ़ाहमत (सुलह) नहीं हो सकती। इनमें से एक क़ुव्वत ग़ालिब होगी तो दूसरी को लाज़मी तौर पर मगलूब होना पड़ेगा। लिहाज़ा अगर हक़ और अहले हक़ ताक़तवर हैं तो वो किसी क़ीमत पर बातिल से समझौता नहीं कर सकते। यही वजह है कि हज़रत अबुबकर सिद्दीक़ रज़ि. ने हालात की नज़ाकत के तहत मुनकरीने ज़कात के साथ रिआयत करने के मशवरे के जवाब में फ़रमाया था: اَيُبَدَّلُ الدِّيْنُ وَاَنَا حَيٌّ (क्या दीन में तरमीम की जाएगी जबकि मैं अभी ज़िन्दा हूँ!)। लिहाज़ा सूरतुल अन्फ़ाल का मुताअला करते हुए इस फ़लसफ़े को पूरी वज़ाहत के साथ समझना और ज़हन में रखना बहुत ज़रूरी है।

<u>गज़वा-ए-बदर का पसमंज़र:</u> मदीना तशरीफ़ लाने के बाद रसूल अल्लाह ﷺ ने दाखली इस्तेहकाम पर तरजीही तौर पर तवज्जो मरकूज़ फ़रमाई। इस सिलसिले में पहले छ: माह में आप ﷺ ने तीन इन्तहाई अहम उमूर सरअंजाम दिए। अव्वलन आप ﷺ ने मस्जिदे नबवी की तामीर मुकम्मल करवाई, जिसकी सूरत में आप ﷺ को एक ऐसा मरकज़ मयस्सर आ गया जो ब-यक-वक़्त (एक ही वक़्त में) एक गवर्नमेंट सेक्रेटरियेट भी था और पार्लिमेंट हाउस भी, दारुलउलूम और खानक़ाह भी था और इबादतगाह भी। सानियन (दूसरा), आप ﷺ ने मुहाजिरीन और अंसार में मुवाखात (भाई-भाई) का रिश्ता क़ायम करा दिया, जिससे ना सिर्फ़ मुहाजिरीन के मआशी व मआशरती मसाइल हल हो गए, बल्कि मदीने में इन दोनों फ़रीक़ों के अफ़राद पर मुशतमिल एक ऐसा मआशरा वजूद में आ गया जिसके अफ़राद बाहमी मोहब्बत और इख़लास के गहरे रिश्ते में मंसलिक (attached) थे। इस सिलसिले का तीसरा और अहम तरीन कारनामा मीसाक़े मदीना था। यानि यहूदी क़बाइल के साथ मदीने के मुशतरिक़ दिफ़ा का मुआहिदा, जिसके तहत हमले की सूरत में मदीने के यहूदी क़बाइल मुसलमानों के साथ मिल कर शहर का दिफ़ा करने के पाबंद हो गए।

दाख़ली महाज़ पर इन मामलात से फ़ारिग होने के बाद हिजरत के सातवें माह से आप ﷺ ने मदीने के ऐतराफ़ व जवानिब में छापा मार दस्ते भेजने शुरू कर दिये। क़ुरैशे मक्का की मईशत का दारोमदार तिजारत पर था और मक्का से यमन और शाम की तरफ़ उनके तिजारती क़ाफ़िले सारा साल रवाँ-दावाँ रहते थे। ये दोनों तिजारती शाहराहें क़ुरैशे मक्का की मईशत के लिये शह रग की हैसियत रखती थीं। आप ﷺ ने इन दोनों शाहराहों पर अपने फ़ौजी दस्तों की नक़ल व हरकत से क़ुरैश को यह बावर करा दिया कि उनकी ये मआशी शह रग अब हमारी ज़द में है और हम जब चाहें इसे काट सकते हैं। अपनी मईशत के बारे में ऐसे खदशात का तस्सवुर क़ुरैश के लिये बहुत ही भयानक था। गज़वा-ए-बदर (2 हिजरी) से पहले, डेढ़ साल के दौरान में ऐसी आठ मुहिम्मात का भेजा जाना तारीख़ से साबित है। इनमें से चार मुहिम्मात में रसूल अल्लाह ﷺ की ब-नफ्से नफ़ीस शिरकत भी शाबित है। आप ﷺ जिन-जिन इलाक़ों में तशरीफ़ ले गए वहाँ पर आबाद क़बाइल के साथ आप ﷺ ने दोस्ती के मुआहिदे कर लिये, इसका नतीजा यह हुआ कि मदीने के ऐतराफ़ व जवानिब में आबाद अक्सर क़बाइल जो पहले क़ुरैश के दोस्त थे अब मुसलमानों के हलीफ बन गए, जबकि कुछ क़बाइल ने गैर जानिबदार रहने के मुआहिदे कर लिये, और यूँ आप ﷺ की कामयाब हिकमते अमली से मदीने के मज़ाफ़ाती इलाक़ों से क़ुरैश का दायरा-ए-असर सुकड़ने लगा। क़ुरैश के लिये मक्का की मआशी नाकाबंदी का खदशा ही कुछ कम परेशान कुन नहीं था कि अब उन्हें इस इलाक़े से अपने सियासी असर व रसूख की बिसात भी लिपटती हुई दिखाई देने लगी, चुनाँचे "तंग आमद बजंग आमद" के मिस्दाक़ वह मदीने पर एक फ़ैसला कुन हमला करने के बारे में संजीदगी से मंसूबा बंदी करने लगे। इसी दौरान उनमें दो ऐसे वाक़िआत हुए जिनकी वजह से हालात तेज़ी से ख़राब होकर गज़वा-ए-बदर पर मुन्तज हुए।

पहला वाक़िया यूँ हुआ कि हुज़ूर ﷺ ने एक छोटा सा दस्ता नख्ला के मक़ाम पर भेजा जो मक्का और ताइफ़ के दरमियान वाक़ेअ है। उन लोगों

को यह मिशन सौंपा गया कि वह उस इलाक़े में मौजूद रहें और क़ुरैश की नक़ल व हरकत के बारे में मुत्तलाअ करते रहें। इत्तेफ़ाक़ से इस दस्ते की मुठभेड़ क़ुरैश के एक तिजारती क़ाफ़िले से हो गई। मुक़ाबले में एक मुशरिक अब्दुल्लाह बिन हज़रमी मारा गया जबकि एक दूसरे मुशरिक को क़ैद कर लिया गया। माले ग़नीमत और क़ैदी के साथ यह लोग जब मदीना पहुँचे तो नबी अकरम ﷺ ने सख्त नाराज़गी का इज़हार फ़रमाया, क्योंकि ऐसा करने का उन्हें हुक्म नहीं दिया गया था, लेकिन जो होना था वह हो चुका था। यह गोया मुसलमानों की तरफ़ से क़ुरैश के ख़िलाफ़ पहला बाक़ायदा मुसल्लह इक़दाम था जिसमें उनका एक शख्स भी क़त्ल हुआ। लिहाज़ा इस वाक़िये से माहौल की कशीदगी में मज़ीद इज़ाफ़ा हो गया।

दूसरा वाक़िया अबु सूफ़ियान के क़ाफ़िले से मुताल्लिक़ हुआ। यह एक बहुत बड़ा तिजारती क़ाफ़िला था जो मक्का से शाम की तरफ़ जा रहा था। नबी अकरम ﷺ ने इसका तअक्कुब किया, मगर वह लोग बच निकलने में कामयाब हो गए। जब यह क़ाफ़िला पचास हज़ार दीनार की मालियत के साज़ो सामान के साथ शाम से वापस आ रहा था तो मुम्किना ख़तरे के पेशे नज़र अबु सूफ़ियान ने क़ाफ़िले की हिफ़ाज़त के लिये दोहरी हिकमते अमली इख्तियार की। उन्होंने एक तरफ़ तो एक तेज़ रफ़्तार सवार को अपने तहफ्फ़ुज़ की ख़ातिर मदद हासिल करने के लिये मक्का रवाना किया और दूसरी तरफ़ मामूल का रास्ता जो बदर के क़रीब से होकर गुज़रता था, उसको छोड़ कर क़ाफ़िले को मदीने से दूर साहिल समन्दर के साथ-साथ निकाल कर ले गये। बरहाल इत्तेफ़ाक़ से मक्के में ये दोनों इश्तेआल अंगेज़ ख़बरें एक के बाद एक पहुँचीं। एक तरफ़ नख्ला से जान बचा कर भागने वाले अफ़राद रोते-पीटते अब्दुल्लाह बिन हज़रमी के क़त्ल की ख़बर लेकर पहुँच गए और दूसरी तरफ़ अबु सूफ़ियान का ऐलची भी दुहाई देते हुए आ पहुँचा कि भागो! दौड़ो! कुछ कर सकते हो तो करो, तुम्हारा क़ाफ़िला मुसलमानों के हाथों लुटने वाला है। इन ख़बरों से मक्के में तो गोया आग भड़क उठी। चुनाँचे फ़ौरी तौर पर एक हज़ार का लश्कर तैयार किया गया जिसके लिये एक सौ घोड़ों पर मुश्तमिल रसाला और नौ सौ ऊँट मुहैय्या किये गए, वाफ़र मिक़दार में सामाने रसद व अस्लाह वगैरह भी फ़राहम किया गया।

<u>मशावरत के बारे में ग़लत फहमी की वज़ाहत:</u> गज़वा-ए-बदर से पहले रसूल अल्लाह ﷺ की सहाबा किराम रज़ि. के साथ जिस मशावरत का ज़िक्र क़ुरान हकीम और तारीख़ में मिलता है उसके बारे में अक्सर लोग मुगालते का शिकार हुए हैं। इस गलतफ़हमी की वजह यह है कि हुज़ूर ﷺ ने दो मौक़ों और दो मक़ामात पर अलग-अलग मशावरत का इन्अक़ाद फ़रमाया था मगर इसे अक्सर व बेशतर लोगों ने एक ही मशावरत समझा है।

पहली मजलिसे मशावरत मदीने में हुई और इसका मक़सद यह फ़ैसला करना था कि अबु सूफ़ियान के क़ाफ़िले को शाम से वापसी पर रोकना चाहिये या नहीं? और जब मशवरे के बाद इस सिलसिले में इक़दाम करना तय पाया तो आप ﷺ कुछ सहाबा रज़ि. को लेकर इस मक़सद के लिये मदीने से रवाना हो गए। चूँकि उस वक़्त तक जंग के बारे में कोई गुमान तक नहीं था इसलिये इस मुहिम के लिये कोई ख़ास तैयारी नहीं की गई थी। जिसके हाथ में जो आया वह लेकर चल पड़ा। चुनाँचे दो घोड़ों, आठ तलवारों और कुछ छोटे-मोटे हथियारों के साथ चंद सहाबा की मईयत (साथ) में जब आप ﷺ मक़ामे सफ़राअ पर पहुँच गए तो आप ﷺ को इत्तलाअ मिली कि अबु जहल एक हज़ार का लश्कर लेकर मक्का से चल पड़ा है। और इसी अशना में अल्लाह ताअला की तरफ़ से वही भी आ गई कि जुनूब (मक्का) की तरफ़ से एक लश्कर आ रहा है जो कील कांटे से लैस है जबकि शिमाल की जानिब से क़ाफ़िला, और मेरा यह वादा है कि इन दोनों में से एक पर आप ﷺ को ज़रूर फ़तह हासिल होगी। लिहाज़ा अहले ईमान को खुशख़बरी भी दें और इनसे मशवरा भी करें। चुनाँचे इस वही के बाद मक़ामे सफ़राअ पर आप ﷺ ने यह फ़ैसला करने के लिये दूसरी मशावरत का इन्तअक़ाद फ़रमाया कि पहले लश्कर के मुक़ाबले के लिये जाया जाए या क़ाफ़िले को रोकने के लिये? चुनाँचे जिन मुहक्किक़ीन और मुफ़स्सिरीन से इस पसमंज़र की तहक़ीक़ में कोताही हुई है और उन्होंने मशावरत के दो वाक़िआत को एक ही वाक़िया समझा है, उन्हें इस सूरत

की मुतालक़ा आयात को समझने और इनका तरजुमा व तशरीह करने में बहुत खलजान रहा है।

<u>सूरत के असलूब का एक ख़ास अंदाज़:</u> यह सूरत दस रुकूआत पर मुश्तमिल एक मुकम्मल ख़ुतबा है, लेकिन इसमें से एक ख़ास मसले को दरमियान में से निकाल कर आगाज़ में लाया गया है, यानि माले ग़नीमत की तक़सीम का मसला। इस मसले की तफ़सीलात सूरत के अंदर अपनी जगह पर ही बयान हुई है, लकिन इस मौज़ू को इतनी अहमियत दी गई कि सूरत का आग़ाज़ ग़ैरमामूली अंदाज़ में इसके ज़िक्र से किया गया। यहाँ माले ग़नीमत की तक़सीम का मसला इसलिये ज़्यादा नुमाया होकर सामने आया कि गज़वा-ए-बदर ज़ज़ीरा नुमाए अरब में अपनी नौइयत का पहला वाक़िया था। इससे पहले अरब में कहीं भी किसी बाक़ायदा फौज़ और उसके डिसिप्लीन की कोई मिसाल मौजूद नहीं थी। चुनाँचे अस्करी नज़्म व ज़ब्त (army rules) और जंगी मामलात के बारे में कोई ज़ाबता और क़ानून भी पहले से मौजूद नहीं था। यही वजह है कि इस गज़वे में फ़तह के बाद मैदाने जंग से जो चीज़ जिसके हाथ लग गई, उसने समझा कि बस अब यह उसकी है। इस सूरते हाल की वजह से बहुत संजीदा नौइयत के मसाइल पैदा हो गए। बाज़ लोगों ने तो भाग-दौड़ करके बहुत ज़्यादा माल जमा कर लिया, जबकी मुख्तलिफ़ वज़ुहात की बिना पर कुछ लोगों के हाथ कुछ भी ना लगा। कुछ लोग अपनी बुज़ुर्गाना हैसियत और वज़अ दारी की बिना पर भाग-दौड़ कर माल इकट्ठा नहीं कर सकते थे। कुछ लोग अहम मक़ामात पर पहरे दे रहे थे और बाज़ रसूल अल्लाह ﷺ की हिफ़ाज़त पर मामूर थे। माले ग़नीमत में से ऐसे तमाम लोगों के हाथ कुछ भी ना आया। यही वजह थी कि इस ज़िमन में इख्तलाफ़ात पैदा हुए। चुनाँचे सूरत की पहली आयत में ही जितला दिया गया कि अल्लाह के यहाँ इस मामले का ख़ास नोटिस लिया गया है और फिर बात भी इस तरह से की गई कि मसले की जड़ ही काट कर रख दी गई। बिल्कुल दो टूक अंदाज़ में बता दिया गया कि माले ग़नीमत सिर्फ़ और सिर्फ़ अल्लाह और उसके रसूल ﷺ का है, किसी और का इस पर किसी क़िस्म का कोई हक़ नहीं। सूरतुल अन्फ़ाल का यह असलूब अगर अच्छी तरह से ज़हन नशीन कर लिया जाए तो इससे हमें सूरतुत्तौबा के मज़ामीन की तरतीब को समझने में भी मदद मिलेगी।

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

आयात 1 से 8 तक

يَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْاَنْفَالِ ؕ قُلِ الْاَنْفَالُ لِلّٰهِ وَالرَّسُوْلِ ۚ فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَصْلِحُوْا ذَاتَ
بَيْنِكُمْ ۪ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗۤ اِنْ كُنْتُمْ مُّؤْمِنِيْنَ ۝١ اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اِذَا
ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ وَاِذَا تُلِيَتْ عَلَيْهِمْ اٰيٰتُهٗ زَادَتْهُمْ اِيْمَانًا وَّعَلٰى رَبِّهِمْ
يَتَوَكَّلُوْنَ ۝٢ الَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ ۝٣ اُولٰٓئِكَ هُمُ
الْمُؤْمِنُوْنَ حَقًّا ؕ لَهُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِيْمٌ ۝٤ كَمَاۤ اَخْرَجَكَ
رَبُّكَ مِنْۢ بَيْتِكَ بِالْحَقِّ ۪ وَاِنَّ فَرِيْقًا مِّنَ الْمُؤْمِنِيْنَ لَكٰرِهُوْنَ ۝٥ ۙ يُجَادِلُوْنَكَ فِى
الْحَقِّ بَعْدَمَا تَبَيَّنَ كَاَنَّمَا يُسَاقُوْنَ اِلَى الْمَوْتِ وَهُمْ يَنْظُرُوْنَ ۝٦ وَاِذْ يَعِدُكُمُ اللّٰهُ
اِحْدَى الطَّآئِفَتَيْنِ اَنَّهَا لَكُمْ وَتَوَدُّوْنَ اَنَّ غَيْرَ ذَاتِ الشَّوْكَةِ تَكُوْنُ لَكُمْ وَيُرِيْدُ
اللّٰهُ اَنْ يُّحِقَّ الْحَقَّ بِكَلِمٰتِهٖ وَيَقْطَعَ دَابِرَ الْكٰفِرِيْنَ ۝٧ ۙ لِيُحِقَّ الْحَقَّ وَيُبْطِلَ الْبَاطِلَ
وَلَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُوْنَ ۝٨ ۚ

आयत 1

يَسْـَٔلُوْنَكَ عَنِ الْاَنْفَالِ ؕ قُلِ الْاَنْفَالُ لِلّٰهِ وَالرَّسُوْلِ ۚ

"(ऐ नबी ﷺ!) यह लोग आपसे अमवाले ग़नीमत के बारे में पूछ रहे हैं, आप कहिये कि अमवाले ग़नीमत कुल के कुल अल्लाह और रसुल के हैं।"

فَاتَّقُوا اللّٰهَ وَاَصۡلِحُوۡا ذَاتَ بَيۡنِكُمۡ ۖ وَاَطِيۡعُوا اللّٰهَ وَرَسُوۡلَهٗۤ اِنۡ كُنۡتُمۡ مُّؤۡمِنِيۡنَ ①

"पस तुम अल्लाह का तक़वा इख्तियार करो, और अपने आपस के मामलात दुरुस्त करो, और अल्लाह और उसके रसूल की इताअत करो अगर तुम मोमिन हो।"

यहाँ माले ग़नीमत के लिये लफ्ज़ "अन्फ़ाल" इस्तेमाल किया गया है। अन्फ़ाल जमा है नफ़ल की और नफ़ल के मायने हैं इज़ाफ़ी शय। मसलन नमाज़े नफ़ल, जिसे अदा कर लें तो बाइसे सवाब है और अगर अदा ना करें तो मुआख़ज़ा नहीं। इसी तरह जंग में असल मतलूब शय तो फ़तह है जबकि माले ग़नीमत एक इज़ाफ़ी ईनाम है।

जैसा कि तम्हीदी गुफ़्तगू में बताया जा चुका है कि गज़वा-ए-बदर के बाद मुसलमानों में माले ग़नीमत की तक़सीम का मसला संजीदा सूरत इख्तियार कर गया था। यहाँ एक मुख्तसर क़तई और दो टूक हुक्म के ज़रिये से इस मसले की जड़ काट दी गयी है और बहुत वाज़ेह अंदाज़ में बता दिया गया है कि अन्फ़ाल कुल के कुल अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की मिल्कियत हैं। इसलिये कि यह फ़तह तुम्हें अल्लाह की ख़ुसूसी मदद और अल्लाह के रसूल ﷺ के ज़रिये से नसीब हुई है। लिहाज़ा अन्फ़ाल के हक़दार भी अल्लाह और उसके रसूल ﷺ ही हैं। इस क़ानून के तहत यह तमाम ग़नीमतें इस्लामी रियासत की मिल्कियत क़रार पाईं और तमाम मुजाहिदीन को हुक्म दे दिया गया कि इन्फ़रादी तौर पर जो चीज़ जिस किसी के पास है वह उसे लाकर बैतुलमाल में जमा करा दे। इस तरीक़े से सब लोगों को ज़ीरो लेवल पर ला कर खड़ा कर दिया गया और यूँ यह मसला अहसन तौर पर हल हो गया। इसके बाद जिसको जो दिया गया उसने वह बखुशी क़ुबूल कर लिया।

अगली आयात इस लिहाज़ से बहुत अहम हैं कि उनमें बंदा-ए-मोमिन की शख्सियत के कुछ खद-ओ-ख़ाल बयान हुए हैं। मगर इन खद-ओ-ख़ाल के बारे में जानने से पहले यह नुक्ता समझना भी ज़रूरी है कि "मोमिन" और "मुस्लमान" दो मुतरादिफ़ अल्फ़ाज़ या इसत्लाहात नहीं हैं। क़ुरान इन दोनों में वाज़ेह फ़र्क़ करता है। यह फ़र्क़ सूरह हुजरात आयत 14 में इस तरह बयान हुआ है: {قَالَتِ الۡاَعۡرَابُ اٰمَنَّا ؕ قُلۡ لَّمۡ تُؤۡمِنُوۡا وَلٰكِنۡ قُوۡلُوۡۤا اَسۡلَمۡنَا وَلَمَّا يَدۡخُلِ الۡاِيۡمَانُ فِىۡ قُلُوۡبِكُمۡ ؕ} "(ऐ नबी ﷺ!) यह बद्दू लोग कहे रहे हैं कि हम ईमान ले आये हैं, इनसे कह दीजिये कि तुम ईमान नहीं लाये हो, बल्कि यूँ कहो कि हम मुसलमान हो गए हैं जबकि ईमान अभी तक तुम्हारे दिलों में दाखिल नहीं हुआ है।" इस्लाम और ईमान का यह फ़र्क़ अच्छी तरह समझने के लिये "अरकाने इस्लाम" की तफ़सील ज़हन में ताज़ा कर लीजिये जो قُوۡلُوۡۤا اَسۡلَمۡنَا का मरहला ऊला तय करने के लिये ज़रूरी है। हज़रत अब्दुल्लाह बिन उमर रज़िअल्लाहू अन्हु से रिवायत है कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इरशाद फ़रमाया:

((بُنِیَ الْاِسْلَامُ عَلٰی خَمْسٍ : شَهَادَةِ اَنْ لَا اِلٰهَ اِلَّا اللّٰهُ وَاَنَّ مُحَمَّدًا عَبْدُهٗ وَرَسُوْلُهٗ وَاِقَامِ الصَّلَاةِ وَاِيْتَاءِ الزَّكَاةِ وَحَجِّ الْبَيْتِ وَصَوْمِ رَمَضَانَ))

"इस्लाम की बुनियाद पाँच चीज़ों पर है: इस बात की गवाही देना कि अल्लाह के सिवा कोई मअबूद नहीं और मुहम्मद ﷺ उसके बन्दे और रसूल हैं, नमाज़ क़ायम करना, ज़कात अदा करना, बैतुल्लाह का हज करना और रमज़ान के रोज़े रखना।"(19)

यह पाँच अरकाने इस्लाम हैं, जिनसे हर मुसलमान वाक़िफ़ है। मगर जब ईमान की बात होगी तो इन पाँच अरकान के साथ दो मज़ीद अरकान इज़ाफ़ी तौर शामिल हो जायेंगे, और वह हैं दिल का यक़ीन और अमल में जिहाद। चुनाँचे मुलाहिज़ा हो सूरतुल हुजरात की अगली आयत में बंदा-ए-मोमिन की शख्सियत का यह नक़्शा:

اِنَّمَا الۡمُؤۡمِنُوۡنَ الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا بِاللّٰهِ وَرَسُوۡلِهٖ ثُمَّ لَمۡ يَرۡتَابُوۡا وَجٰهَدُوۡا بِاَمۡوَالِهِمۡ وَاَنۡفُسِهِمۡ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ ؕ اُولٰٓئِكَ هُمُ الصّٰدِقُوۡنَ ۝۱۵

"मोमिन तो बस वो हैं जो ईमान लायें अल्लाह पर और उसके रसूल पर, फिर उनके दिलों में शक बाक़ी ना रहे और वह जिहाद करें अपने मालों और जानों के साथ अल्लाह की राह में। सिर्फ़ वही लोग (अपने दावा-ए-ईमान में) सच्चे है।"

यानि कलमा-ए-शहादत पढ़ने के बाद इंसान क़ानूनी तौर पर मुसलमान हो गया और तमाम अरकाने इस्लाम उसके लिये लाज़मी क़रार पाए। मगर हक़ीक़ी मोमिन वह तब बनेगा जब उसके दिल को गहरे यक़ीन (ثُمَّ لَمْ يَرْتَابُوْا) वाला ईमान नसीब होगा और अमली तौर पर वह जिहाद में भी हिस्सा लेगा।

बंदा-ए-मोमिन की इसी तारीफ़ (definition) की रोशनी में अहले ईमान की कैफ़ियत यहाँ सूरतुल अन्फ़ाल में दो हिस्सों में अलग़-अलग़ बयान हुई है। वह इस तरह कि हक़ीक़ी ईमान वाले हिस्से की कैफ़ियत को आयत 2 और 3 में बयान किया गया है, जबकि उसके दूसरे (जिहाद वाले) हिस्से की कैफ़ियात को सूरत की आखरी आयत से पहले वाली आयत में बयान किया गया है। इसकी मिसाल ऐसे है जैसे एक परकार (compass) को खोल दिया गया हो, जिसकी एक नोक सूरत के आग़ाज़ पर है (पहली आयत छोड़ कर) जबकि दूसरी नोक सूरत के आख़िर पर है (आखरी आयत छोड़ कर)। इस वज़ाहत के बाद अब मुलाहिज़ा हो बंदा-ए-मोमिन की तारीफ़ (definition) का पहला हिस्सा:

आयत 2

اِنَّمَا الْمُؤْمِنُوْنَ الَّذِيْنَ اِذَا ذُكِرَ اللّٰهُ وَجِلَتْ قُلُوْبُهُمْ وَاِذَا تُلِيَتْ عَلَيْهِمْ اٰيٰتُهٗ زَادَتْهُمْ اِيْمَانًا وَّعَلٰى رَبِّهِمْ يَتَوَكَّلُوْنَ ۝٢

"हक़ीक़ी मोमिन तो वही हैं कि जब अल्लाह का ज़िक्र किया जाता है तो उनके दिल लरज़ जाते हैं और जब उन्हें उसकी आयात पढ़ कर सुनाई जाती हैं तो उनके ईमान में इज़ाफ़ा हो जाता है, और वह अपने रब ही पर तवक्कुल करते हैं।"

आयत 3

اَلَّذِيْنَ يُقِيْمُوْنَ الصَّلٰوةَ وَمِمَّا رَزَقْنٰهُمْ يُنْفِقُوْنَ ۝٣

"जो नमाज़ को क़ायम रखते हैं और जो कुछ हमने उन्हें दिया है उसमें से खर्च करते हैं।"

इससे इन्फ़ाक़ फ़ी सबिलिल्लाह मुराद है। यानि वह लोग अल्लाह के दीन के लिये खर्च करते हैं।

आयत 4

اُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ حَقًّا

"यही लोग हैं जो हक़ीक़ी मोमिन हैं।"

यहाँ पर एक मोमिन की तारीफ़ (definition) का पहला हिस्सा बयान हुआ है, जबकि इसका दूसरा और तकमीली हिस्सा इस सूरत की आयत 74 में बयान होगा, यानि आखरी से पहली (second last) आयत में। उस आयत में भी यही अल्फ़ाज़ { اُولٰٓئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُوْنَ حَقًّا } एक दफ़ा फिर आएँगे। ईमान के इन हक़ाइक़ को तक़सीम कर के सूरत के आगाज़ और इख्तताम पर इस तरह रखा गया है जैसे सारी सूरत इस मज़मून की गोद में आ गयी हो।

لَهُمْ دَرَجٰتٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ وَمَغْفِرَةٌ وَّرِزْقٌ كَرِيْمٌ ۝٤

"उनके लिये उनके रब के पास (ऊँचे) दरजात और मगफ़िरत और इज्ज़त वाला रिज़्क़ है।"

यहाँ से अब गज़वा-ए-बदर का ज़िक्र शुरू हो रहा है।

आयत 5

كَمَآ اَخۡرَجَكَ رَبُّكَ مِنۡۢ بَيۡتِكَ بِالۡحَقِّ وَاِنَّ فَرِيۡقًا مِّنَ الۡمُؤۡمِنِيۡنَ لَكٰرِهُوۡنَ ۝۵

"जैसे कि निकाला आपको (ऐ नबी ﷺ) आपके रब ने आपके घर से हक़ के साथ, और यक़ीनन अहले ईमान में से कुछ लोग इसे पसंद नहीं कर रहे थे।"

यह उस पहली मुशावरत (सलाह) का ज़िक्र है जो रसूल अल्लाह ﷺ ने सहाबा रज़ि. से मदीने ही में फ़रमाई थी। लश्कर के मैदाने बदर की तरफ़ रवानगी को नापसंद करने वाले दो क़िस्म के लोग थे। एक तो मुनाफ़िक़ीन थे जो किसी क़िस्म की आज़माइश में पड़ने तो तैयार नहीं थे। वह अपने मंसूबे के तहत इस तरह की किसी मुहिमजोई की रिवायत को "Nip the evil in the bud" के मिस्दाक़ इब्तदा ही में ख़त्म करना चाहते थे। इसके लिये उनके दलाइल बज़ाहिर बड़े भले थे कि लड़ाई-झगड़ा अच्छी बात नहीं है, हमें तो अच्छी बातों और अच्छे अख्लाक़ से दीन की तब्लीग करनी चाहिये, और लड़ने-भिड़ने से बचना चाहिये, वगैरह-वगैरह। दूसरी तरफ़ कुछ नेक सरश्त सच्चे मोमिन भी ऐसे थे जो अपने ख़ास मिज़ाज और सादालोही के सबब यह राय रखते थे कि अभी तक क़ुरैश की तरफ़ से तो किसी क़िस्म का कोई इक़दाम नहीं हुआ, लिहाज़ा हमें आगे बढ़ कर पहल नहीं करनी चाहिये। ज़ेरे नज़र आयत में दो टूक अल्फ़ाज़ में वाज़ेह किया गया है कि हुज़ूर ﷺ का बदर की तरफ़ रवाना होना अल्लाह तआला की तदबीर का एक हिस्सा था।

आयत 6

يُجَادِلُوۡنَكَ فِى الۡحَقِّ بَعۡدَمَا تَبَيَّنَ

"वो लोग आपसे झगड़ रहे थे हक़ के बारे में, इसके बाद कि बात (उन पर) बिल्कुल वाज़ेह हो चुकी थी"

यह आयत मेरे नज़दीक दूसरी मुशावरत (सलाह) के बारे में है जो मक़ामे सफ़राअ पर मुनअक़िद हुई थी। नबी अकरम ﷺ मदीने से क़ुरैश के तिजारती क़ाफ़िले का पीछा करने के इरादे से निकले थे, और यह बज़ाहिर इसी तरह की एक मुहीम थी जिस तरह की आठ मुहिमात उस इलाक़े में पहले भी भेजी जा चुकी थीं। उस वक़्त तक लश्करे क़ुरैश के बारे में ना कोई इत्तलाअ थी और ना ही ऐसा कोई गुमान था। लेकिन जब आप ﷺ मदीने से निकल कर सफ़राअ के मक़ाम पर पहुँचे तो आप ﷺ को अपने ज़राए से भी लश्करे क़ुरैश की मक्के से रवानगी की इत्तलाअ मिल गई और अल्लाह तआला ने वही के ज़रिये भी आप ﷺ को इस बारे में मुतल्लाअ फ़रमा दिया। चुनाँचे जिस तरह हज़रत तालूत ने रास्ते में अपने लश्कर की आज़माइश की थी कि दरिया को उबूर करते हुए जो शख्स सैर होकर पानी पियेगा उसका मुझसे कोई ताल्लुक़ नहीं रहेगा और इस तरह मुख्लिस साथियों का ख़ुलूस ज़ाहिर हो गया, इसी तरह आप ﷺ ने भी अल्लाह के हुक्म से सारा मामला मुसलमानों के सामने मुशावरत के लिये रख दिया और उनको वाज़ेह तौर पर बता दिया कि मक्के से अबु जहल एक हज़ार जंगजुओं पर मुश्तमिल लश्करे जरार लेकर रवाना हो चुका है।

كَاَنَّمَا يُسَاقُوۡنَ اِلَى الۡمَوۡتِ وَهُمۡ يَنۡظُرُوۡنَ ۝۶

"(वह लोग ऐसे महसूस कर रहे थे) जैसे उन्हें मौत की तरफ़ धकेला जा रहा हो और वह उसे देख रहे हों।"

ज़ाहिर बात है यह कैफ़ियत तो पक्के मुनाफ़िक़ीन ही की हो सकती थी।

आयत 7

وَاِذۡ يَعِدُكُمُ اللّٰهُ اِحۡدَى الطَّآئِفَتَيۡنِ اَنَّهَا لَكُمۡ

"और याद करो जबकि अल्लाह वादा कर रहा था तुम लोगों से कि उन दोनों गिरोहों में से एक तुम्हें मिल जायेगा"

लश्कर या क़ाफ़िले में से किसी एक पर मुसलमानों की फ़तह की ज़मानत अल्लाह तआला की तरफ़ से दे दी गई थी।

وَتَوَدُّوْنَ اَنَّ غَيْرَ ذَاتِ الشَّوْكَةِ تَكُوْنُ لَكُمْ

"और (ऐ मुसलमानों!) तुम यह चाहते थे कि जो बग़ैर कांटे के है वह तुम्हारे हाथ आये"

तुम लोगों की ख्वाहिश थी कि लश्कर और क़ाफ़िले में से किसी एक के मगलूब होने की ज़मानत है तो फिर गैर मुसल्लाह (बिना हथियारों वाला) गिरोह यानि क़ाफ़िले ही की तरफ़ जाया जाये, क्योंकि उसमें कोई ख़तरा और खदशा (रिस्क) नहीं था। क़ाफ़िले के साथ बमुश्किल पचास या सौ आदमी थे जबकि उसमें पचास हज़ार दीनार की मालियत के साज़ो-सामान से लदे-फंदे सैंकड़ो ऊँट थे, लिहाज़ा इस क़ाफ़िले पर बड़ी आसानी से क़ाबू पाया जा सकता था और बज़ाहिर अक़्ल का तक़ाज़ा भी यही था। उन लोगों की दलील यह थी कि हमारे पास तो हथियार भी नहीं हैं और सामान-ए-रसद वगैरह भी नाकाफ़ी है, हम पूरी तैयारी करके मदीने से निकले ही नहीं हैं, लिहाज़ा यह बेहतर होगा कि पहले क़ाफ़िले की तरफ़ जाएँ, इस तरह साज़ो-सामान भी मिल जायेगा, अहले क़ाफ़िले के हथियार भी हमारे क़ब्ज़े में आ जाएँगे और इसके बाद लश्कर का मुक़ाबला हम बेहतर अंदाज़ में कर सकेगें। तो गोया अक़्ल व मन्तिक़ भी इसी राय के साथ थी।

وَيُرِيْدُ اللّٰهُ اَنْ يُّحِقَّ الْحَقَّ بِكَلِمٰتِهٖ وَيَقْطَعَ دَابِرَ الْكٰفِرِيْنَ ۙ﴿۷﴾

"और अल्लाह चाहता था कि अपने फ़ैसले के ज़रिये से हक़ का हक़ होना साबित कर दे और काफ़िरों की जड़ काट दे।"

यह वही बात है जो हम सूरह अनआम में पढ़ आये हैं: { فَقُطِعَ دَابِرُ الْقَوْمِ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا } (आयत 45) कि ज़ालिम क़ौम की जड़ काट दी गई। यानि अल्लाह का इरादा कुछ और था। यह सब कुछ दुनिया के आम क़ायदे क़वाइद व ज़वाबित (physical laws) के तहत नहीं होने जा रहा था। अल्लाह तआला उस दिन को "यौमुल फ़ुरक़ान" बनाना चाहता था। वह तीन सौ तेरह निहत्थे अफ़राद के हाथों कील-कांटे से पूरी तरह मुस्सल्लाह एक हज़ार जंगजुओं के लश्कर को ज़िल्लत आमेज़ शिकस्त दिलवा कर दिखाना चाहता था कि अल्लाह की ताईद व नुसरत किसके साथ है और चाहता था कि काफ़िरों की जड़ काट कर रख दे।

आयत 8

لِيُحِقَّ الْحَقَّ وَيُبْطِلَ الْبَاطِلَ وَلَوْ كَرِهَ الْمُجْرِمُوْنَ ۚ﴿۸﴾

"ताकि सच्चा साबित कर दे हक़ को और झूठा साबित कर दे बातिल को, ख्वाह यह मुजरिमों को कितना ही नागवार हो।"

आयात 9 से 19 तक

اِذْ تَسْتَغِيْثُوْنَ رَبَّكُمْ فَاسْتَجَابَ لَكُمْ اَنِّيْ مُمِدُّكُمْ بِاَلْفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُرْدِفِيْنَ ﴿۹﴾ وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى وَلِتَطْمَئِنَّ بِهٖ قُلُوْبُكُمْ ۭ وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۭ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿۱۰﴾ اِذْ يُغَشِّيْكُمُ النُّعَاسَ اَمَنَةً مِّنْهُ وَيُنَزِّلُ عَلَيْكُمْ مِّنَ السَّمَاۗءِ مَاۗءً لِّيُطَهِّرَكُمْ بِهٖ وَيُذْهِبَ عَنْكُمْ رِجْزَ الشَّيْطٰنِ وَلِيَرْبِطَ عَلٰي قُلُوْبِكُمْ وَيُثَبِّتَ بِهِ الْاَقْدَامَ ﴿۱۱﴾ اِذْ يُوْحِيْ رَبُّكَ اِلَى الْمَلٰٓئِكَةِ اَنِّيْ مَعَكُمْ فَثَبِّتُوا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۭ سَاُلْقِيْ فِيْ قُلُوْبِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا الرُّعْبَ فَاضْرِبُوْا فَوْقَ الْاَعْنَاقِ وَاضْرِبُوْا مِنْهُمْ كُلَّ بَنَانٍ ﴿۱۲﴾ ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ شَاۗقُّوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ ۚ وَمَنْ يُّشَاقِقِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ﴿۱۳﴾ ذٰلِكُمْ فَذُوْقُوْهُ وَاَنَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابَ النَّارِ ﴿۱۴﴾ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا لَقِيْتُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا زَحْفًا فَلَا تُوَلُّوْهُمُ الْاَدْبَارَ ﴿۱۵﴾ وَمَنْ يُّوَلِّهِمْ يَوْمَىِٕذٍ دُبُرَهٗٓ اِلَّا مُتَحَرِّفًا لِّقِتَالٍ اَوْ مُتَحَيِّزًا اِلٰى فِئَةٍ فَقَدْ بَاۗءَ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَمَاْوٰىهُ جَهَنَّمُ ۭ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ﴿۱۶﴾ فَلَمْ تَقْتُلُوْهُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ قَتَلَهُمْ ۠ وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى ۚ وَلِيُبْلِيَ الْمُؤْمِنِيْنَ مِنْهُ بَلَاۗءً حَسَنًا ۭ اِنَّ اللّٰهَ

سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ﴿١٧﴾ ذٰلِكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ مُوْهِنُ كَيْدِ الْكٰفِرِيْنَ ﴿١٨﴾ اِنْ تَسْتَفْتِحُوْا فَقَدْ
جَآءَكُمُ الْفَتْحُ ۚ وَاِنْ تَنْتَهُوْا فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَاِنْ تَعُوْدُوْا نَعُدْ ۚ وَلَنْ تُغْنِيَ عَنْكُمْ
فِئَتُكُمْ شَيْـًٔا وَّلَوْ كَثُرَتْ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ﴿١٩﴾

आयत 9

اِذْ تَسْتَغِيْثُوْنَ رَبَّكُمْ فَاسْتَجَابَ لَكُمْ
اَنِّيْ مُمِدُّكُمْ بِاَلْفٍ مِّنَ الْمَلٰٓئِكَةِ مُرْدِفِيْنَ
﴿٩﴾

"याद करो जबकि तुम लोग अपने रब से फ़रियाद कर रहे थे, तो उसने तुम्हारी दुआ क़ुबूल की थी, कि मैं तुम्हारी मदद करूँगा एक हज़ार मलाइका (फ़रिश्तों) के साथ जो पे दर पे आयेंगे।"

क़ुरैश के एक हज़ार के लश्कर के मुक़ाबले में तुम्हारी मदद के लिये एक हज़ार फ़रिश्ते आसमानों से क़तार दर क़तार उतरेंगे।

आयत 10

وَمَا جَعَلَهُ اللّٰهُ اِلَّا بُشْرٰى وَلِتَطْمَئِنَّ بِهٖ
قُلُوْبُكُمْ ۚ

"और अल्लाह ने इसको नहीं बनाया मगर (तुम्हारे लिये) बशारत, और ताकि तुम्हारे दिल इससे मुत्मईन हो जाएँ।"

وَمَا النَّصْرُ اِلَّا مِنْ عِنْدِ اللّٰهِ ۙ اِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ
حَكِيْمٌ ﴿١٠﴾

"और मदद तो अल्लह ही की तरफ़ से होती है। यक़ीनन अल्लाह तआला ज़बरदस्त, हिकमत वाला है।"

अल्लाह तआला तो "कुन फ़-यकून" की शान के साथ जो चाहे कर दे। वह फ़रिश्तों को भेजे बगैर भी तुम्हारी मदद कर सकता था, लेकिन इंसानी ज़हन का चूँकि सोचने का अपना एक अंदाज़ है, इसलिये उसने तुम्हारे दिलों की तस्कीन और तस्सल्ली के लिये ना सिर्फ़ एक हज़ार फ़रिश्ते भेजे बल्कि तुम्हें उनकी आमद की इत्तलाअ भी दे दी कि खातिर जमा रखो, हम तुम्हारी मदद के लिये फ़रिश्ते भेज रहे हैं। वाज़ेह रहे कि अल्लाह के वादे के मुताबिक़ मैदाने बदर में फ़रिश्ते उतरे ज़रूर हैं लेकिन उन्होंने अमली तौर पर लड़ाई में हिस्सा नहीं लिया। अमली तौर पर जंग कुफ्फ़ार के एक हज़ार और मुसलमानों के तीन सौ तेरह अफ़राद के दरमियान हुई और क़ुव्वते ईमानी से सरशार मुसलमान इस बेजिगरी और बेखौफ़ी से लड़े कि एक हज़ार पर ग़ालिब आ गए।

आयत 11

اِذْ يُغَشِّيْكُمُ النُّعَاسَ اَمَنَةً مِّنْهُ وَيُنَزِّلُ
عَلَيْكُمْ مِّنَ السَّمَآءِ مَآءً لِّيُطَهِّرَكُمْ بِهٖ

"याद करो जबकि अल्लाह तुम्हारी तस्कीन के लिये तुम पर नींद तारी कर रहा था और तुम पर आसमान से पानी बरसा रहा था ताकि उससे तुम्हें पाक करे"

बदर की रात तमाम मुसलमान बहुत पुरसकून नींद सोये और उसी रात गैर मामूली अंदाज़ में बारिश भी हुई। मुसलमानों की यह पुरसकून नींद और बारिश का नुज़ूल गोया दो मौअज्ज़े थे, जिनका ज़हूर मुसलमानों की ख़ास मदद के लिये अमल में आया। यह मौज्ज़ात इस अंदाज़ में ज़हूर पज़ीर नहीं हुए थे कि रसूल अल्लाह ﷺ ने बाक़ायदा इनके बारे में ऐलान फ़रमाया हो, या यह कि यह बिल्कुल खर्क़े आदत वाक़िआत हो, बल्कि यह मौज्ज़ात इस अंदाज़ में थे कि उस वक़्त इन दोनों वाक़िआत से मुसलमानों को गैर मामूली तौर पर मदद मिली, और इसलिये भी कि ऐसी चीज़ें महज़ इत्तेफ़ाक़ात से ज़हूर पज़ीर नहीं होती। हक़ीक़त में गज़वा-ए-बदर का यह मामला मुसलमानों के लिये बहुत सख्त था, जिसकी वजह से हर शख्स के लिये बज़ाहिर फ़िक्रमंदी, तशवीश और अंदेशा हाए दूरदराज़ की इन्तहा होनी चाहिये थी कि कल जो कुछ होने जा रहा है उसमें मैं ज़िन्दा भी बच पाऊँगा या नहीं? मगर अमली तौर पर यह मामला बिल्कुल इसके बरअक्स

हुआ। मुसलमान रात को आराम व सुकून की नींद सोये और सुबह बिल्कुल ताज़ा दम और चाक़ व चौबंद होकर उठे। इसी तरह उस रात जो बारिश हुई वह भी मुसलमानों के लिये अल्लाह की ताईद व नुसरत साबित हुई। उस बारिश से दूसरे फ़ायदों के अलावा मुसलमानों को एक यह सहूलत भी मयस्सर आ गई कि जिन लोगों को गुसल की हाजत थी उन्हें गुसल का मौक़ा मिल गया।

وَيُذْهِبَ عَنْكُمْ رِجْزَ الشَّيْطٰنِ وَلِيَرْبِطَ عَلٰى قُلُوْبِكُمْ وَيُثَبِّتَ بِهِ الْاَقْدَامَ ۝

"और ताकि दूर कर दे तुमसे शैतान की (डाली हुई) नजासत को और ताकि तुम्हारे दिलों को मज़बूत कर दे और इससे तुम्हारे पाँव जमा दे।"

इस बारिश में मुसलमानों के लिये इत्मिनाने क़ुलूब का एक पहलू यह भी था कि उन्हें उस खुश्क सहरा के अंदर पानी का वाफ़र ज़खीरा मिल गया, वरना लश्करे क़ुरैश पहले आकर पानी के तालाब पर क़ब्ज़ा कर चुका था और मुसलमान इससे महरूम हो चुके थे। बारिश हुई तो नशेब की बिना पर सारा पानी मुसलमानों की तरफ़ जमा हो गया, जिसे उन्होंने बंद वगैरह बाँध कर ज़खीरा कर लिया। बारिश की वजह से मिट्टी दब गई, रेत फ़र्श की तरह हो गई और चलने-फिरने में सहुलत हो गई।

आयत 12

اِذْ يُوْحِيْ رَبُّكَ اِلَى الْمَلٰٓئِكَةِ اَنِّيْ مَعَكُمْ فَثَبِّتُوا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا ۭ

"याद करे जब आपका रब वही कर रहा था फ़रिश्तों को कि मैं तुम्हारे साथ हूँ, तो तुम (जाओ और) अहले ईमान तो साबित क़दम रखो।"

वही एक हज़ार फ़रिश्ते जिनका ज़िक्र पहले गुज़र चुका है, उन्हें मैदाने जंग में मुसलमानों के शाना-ब-शाना रहने की हिदायत का तज़किरा है।

سَاُلْقِيْ فِيْ قُلُوْبِ الَّذِيْنَ كَفَرُوا الرُّعْبَ فَاضْرِبُوْا فَوْقَ الْاَعْنَاقِ وَاضْرِبُوْا مِنْهُمْ كُلَّ بَنَانٍ ۝

"मै अभी इन काफ़िरों के दिलों में रौब डाले देता हूँ, पस मारों इनकी गर्दनों के ऊपर और मारो इनकी एक-एक पोर पर।"

अल्लाह तआला ने कुफ्फ़ार को भरपूर मुक़ाबले के दौरान दहशतज़दा कर दिया था और जब कोई शख्स अपने हरीफ़ के मुक़ाबले में दहशतज़दा हो जाए तो उसके अंदर क़ुव्वते मदाफ़अत नहीं रहती। फिर वह गोया हमलावर के रहम व करम पर होता है, वह जिधर से चाहे उसे चोट लगाये, जिधर से चाहे उसे मारे।

आयत 13

ذٰلِكَ بِاَنَّهُمْ شَاۗقُّوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ ۚ وَمَنْ يُّشَاقِقِ اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ فَاِنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

"और यह (सज़ा इनकी) इसलिये है कि इन्होंने मुखालफ़त की अल्लाह और उसके रसूल की, और जो अल्लाह और इसके रसूल के साथ दुश्मनी करे तो अल्लाह भी सज़ा देने में बहुत सख्त है।"

इसके बाद अब क़ुरैश से बराहेरास्त खिताब है।

आयत 14

ذٰلِكُمْ فَذُوْقُوْهُ

"(लो) यह तो चखो"

अभी हमारी तरफ़ से सज़ा की पहली क़िस्त वसूल करो।

“और यह (भी तुम्हें मालूम रहे) कि काफ़िरों के लिये जहन्नम का अज़ाब है।”

وَاَنَّ لِلْكٰفِرِيْنَ عَذَابَ النَّارِ ﴿١٤﴾

यानि यह मत समझना कि तुम्हारी यही सज़ा है, बल्कि असल सज़ा तो जहन्नम होगी, उसके लिये भी तैयार रहो।

आयत 15

“ऐ अहले ईमान, जब तुम्हारा मुक़ाबला हो जाये काफ़िरों से मैदाने जंग में”

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا لَقِيْتُمُ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا زَحْفًا

“ज़हफ़” में बाक़ायदा दो लश्करों के एक-दूसरे के मद्दे-मुक़ाबिल आकर लड़ने का मफ़हूम पाया जाता है। गज़वा-ए-बदर से पहले रसूल अल्लाह ﷺ की तरफ़ से इलाक़े में आठ मुहिम्मात (expeditions) भेजी गई थीं, मगर उनमें से कोई मुहिम भी बाक़ायदा जंग की शक्ल में नही थी। ज़्यादा से ज़्यादा उन्हें छापा मार मुहिम्मात कहा जा सकता है, लेकिन बदर में मुसलमानों की कुफ्फ़ार के साथ पहली मरतबा दू-ब-दू जंग हुई है। चुनाँचे ऐसी सूरते हाल के लिये हिदायात दी जा रही हैं कि जब मैदान में बाक़ायदा जंग के लिये तुम लोग कुफ्फ़ार के मुक़ाबिल आ जाओ:

“तो तुम उनसे पीठ मत फेरना।”

فَلَا تُوَلُّوْهُمُ الْاَدْبَارَ ﴿١٥﴾

मतलब यह है कि डटे रहो, मुक़ाबला करो। जान चली जाए मगर क़दम पीछे ना हटें।

आयत 16

“और जो कोई भी उनसे उस दिन अपनी पीठ फेरेगा”

وَمَنْ يُّوَلِّهِمْ يَوْمَىِٕذٍ دُبُرَهٗٓ

यानि अगर कोई मुसलमान मैदाने जंग से जान बचाने के लिये भागेगा।

“सिवाय इसके कि वह कोई दाँव लगा रहा हो जंग के लिये”

اِلَّا مُتَحَرِّفًا لِّقِتَالٍ

जैसे दो आदमी दू-ब-दू मुक़ाबला कर रहे हों और लड़ते-लड़ते कोई दांए, बांए या पीछे को हटे, बेहतर दाँव के लिये पैंतरा बदले तो यह भागना नहीं है, बल्कि यह तो एक तदबीराती हरकत (tactical move) शुमार होगी। इसी तरह जंगी हिकमते अमली के तहत कमांडर के हुकुम से कोई दस्ता किसी जगह से पीछे हट जाए और कोई दूसरा दस्ता उसकी जगह ले ले तो यह भी पसपाई के ज़ुमरे में नहीं आएगा।

“या किसी दूसरी (जमीअत) से मिलना हो”

اَوْ مُتَحَيِّزًا اِلٰى فِئَةٍ

यानि लड़ाई के दौरान अपने लश्कर के किसी दूसरे हिस्से से मिलने के लिये मुनज़्ज़म तरीक़े से पीछे हटना (orderly retreat) भी पीठ फेरने के ज़ुमरे में नहीं आयेगा। इन दो इस्तसनाई सूरतों के अलावा अगर किसी ने बुज़दिली दिखाई और भगदड़ के अंदर जान बचा कर भागा:

“तो वह अल्लाह का गज़ब ले कर लौटा और उसका ठिकाना जहन्नम है, और वह बहुत ही बुरा ठिकाना है।”

فَقَدْ بَاۗءَ بِغَضَبٍ مِّنَ اللّٰهِ وَمَاْوٰىهُ جَهَنَّمُ ۭ وَبِئْسَ الْمَصِيْرُ ﴿١٦﴾

अब अगली आयत में यह बात वाज़ेहतर अंदाज़ में सामने आ रही है कि गज़वा-ए-बदर दुनियावी क़वाइद व ज़वाबित के मुताबिक़ नहीं, बल्कि अल्लाह की ख़ास मशीयत के तहत वक़ूअ पज़ीर हुआ था।

आयत 17

فَلَمْ تَقْتُلُوْهُمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ قَتَلَهُمْ ۪

"पस (ऐ मुसलमानों!) तुमने उन्हें क़तल नहीं किया, बल्कि अल्लाह ने उन्हें क़तल किया"

वैसे तो हर काम में फ़ाइले हक़ीक़ी अल्लाह ही है, हम जो भी काम करते हैं वह अल्लाह की मशीयत से मुमकिन होता है, और जिस शय के अंदर जो भी तासीर है वह भी अल्लाह ही की तरफ़ से है। आम हालात के लिये भी अगरचे यही क़ायदा है: "لَا فَاعِلَ فِی الْحَقِیْقَۃِ وَلَا مُؤَثِّرَ اِلَّا اللہ" लेकिन यह तो मखसूस हालात थे जिनमें अल्लाह की ख़ुसूसी मदद आई थी।

وَمَا رَمَيْتَ اِذْ رَمَيْتَ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ رَمٰى ۚ

"और जब आपने (उन पर कंकरियाँ) फेंकी थीं तो वह आपने नहीं फेंकी थीं बल्कि अल्लाह ने फेंकी थीं"

मैदाने जंग में जब दोनों लश्कर आमने-सामने हुए तो रसूल अल्लाह ﷺ ने कुछ कंकरियाँ अपनी मुठ्ठी में लीं और شَاهَتِ الْوُجُوْہ (चेहरे बिगड़ जाएँ) फ़रमाते हुए कुफ्फ़ार की तरफ़ फेंकीं। अल्लाह तआला जानता है कि वह कंकरियाँ कहाँ-कहाँ तक पहुँची होंगी और उनके कैसे-कैसे असरात कुफ्फ़ार पर मुरत्तब हुए होंगे। बरहाल यहाँ पर आप ﷺ के अमल को भी अल्लाह तआला अपनी तरफ़ मंसूब कर रहा है कि ए नबी (ﷺ) जब वह कंकरियाँ आपने फेंकी थीं, तो वह आप ﷺ ने नहीं फेंकी थीं बल्कि अल्लाह ने फेंकी थीं। इसी बात को इक़बाल ने इन अल्फ़ाज़ में बयान किया है: *"हाथ है अल्लाह का बन्दा-ए-मोमिन का हाथ!"*

وَلِيُبْلِيَ الْمُؤْمِنِيْنَ مِنْهُ بَلَآءً حَسَنًا ۭ

"ताकि अल्लाह इससे अहले ईमान के जौहर निखारे ख़ूब अच्छी तरह से।"

अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसी आज़माइशें अपने बन्दों की मख्फ़ी सलाहियतों को उजागर करने के लिये होती हैं। بَلَا, يَبْلُو, بَلَاءً के मायने हैं आज़माना, तकलीफ़ और आज़माइश में डाल कर किसी को परख़ना, लेकिन اَبْلٰى, يُبْلِى जब बाबे अफ़आल से आता है तो किसी के जौहर निखारने के मायने देता है।

اِنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝

"यक़ीनन अल्लाह तआला सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है।"

आयत 18

ذٰلِكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ مُوْهِنُ كَيْدِ الْكٰفِرِيْنَ ۝

"यह तो हो चुका, और (आइन्दा के लिये भी समझ लो कि) अल्लाह कुफ्फ़ार की तमाम चालों को नाकाम बना देने वाला है।"

यह गोया अहले ईमान और कुफ्फ़ार दोनों को मुख़ातिब कर के फ़रमाया जा रहा है। इसके बाद सिर्फ़ कुफ्फ़ार से ख़िताब है। अबुजहल को बहैसियते सिपेसालार अपने लश्कर की तादाद, अस्लाह और साज़ो सामान की फ़रावानी के हवाले से पूरा यक़ीन था कि हम मुसलमानों को कुचल कर रख देंगे। चुनाँचे उन्होंने पहले ही प्रोपोगंडा शुरू कर दिया था कि मअरके (लड़ाई) का दिन "यौमुल फ़ुरक़ान" साबित होगा और उस दिन यह वाज़ेह हो जाएगा कि अल्लाह किसके साथ है। अल्लाह को तो कुफ्फ़ार भी मानते थे। चुनाँचे तारीख़ की किताबों में अबुजहल की इस दुआ के अल्फ़ाज़ भी मन्क़ूल हैं जो बदर की रात उसने ख़ुसूसी तौर पर अल्लाह तआला से माँगी थी। उस रात जब एक तरफ़ हुज़ूर अकरम ﷺ दुआ माँग रहे थे तो दूसरी तरफ़ अबुजहल भी दुआ माँग रहा था। उसकी दुआ हैरत अंगेज़ हद तक मुवह्हिदाना है। उस दुआ में लात, मनात, उज्ज़ा, और हुबल वगैरह का

कोई ज़िक्र नहीं, बल्कि उस दुआ में वह बराहेरास्त अल्लाह तआला से इल्तिजा कर रहा है: اللّٰهم اقطعنا للرحم فاحنه الغداة कि ऐ अल्लाह जिस शख्स ने हमारे रहमी रिश्ते काट दिए हैं, कल तू उसे कुचल कर रख दे। इस दुआ से यह भी पता चलता है कि अबुजहल का हुज़ूर ﷺ पर सबसे बड़ा इल्ज़ाम यह था कि आप ﷺ की वजह से क़ुरैश के खून के रिश्ते कट गए थे। मसलन एक भाई मुसलमान हो गया है और बाक़ी काफ़िर हैं, तो ना सिर्फ़ यह कि उनमें अख़ुवत (भाई) का रिश्ता बाक़ी ना रहा, बल्कि वह एक-दूसरे के दुश्मन बन गए। इसी तरह औलाद माँ-बाप से और बीवियाँ अपने शौहरों से कट गयीं। चूँकि इस अमल से क़ुरैश की यकजहती (एकता), ताक़त और साख बुरी तरह मुतास्सिर हुई थी, इसलिये सबसे ज़्यादा उन्हें इसी बात का क़ल्क़ (फ़िक्र) था। बरहाल अबुजहल समेत तमाम क़ुरैश की ख्वाहिश थी और वह दुआ गोह थे कि इस चप्पलिश का वाज़ेह फ़ैसला सामने आ जाए। उनकी इसी ख्वाहिश और दुआ का जवाब यहाँ दिया जा रहा है।

आयत 19

اِنْ تَسْتَفْتِحُوْا فَقَدْ جَآءَكُمُ الْفَتْحُ ۚ

"अगर तुम फ़ैसला चाहते थे तो तुम्हारे पास (अल्लाह का) फ़ैसला आ चुका है।"

अल्लाह तआला ने फ़ैसलाकुन फ़तह के ज़रिये बता दिया कि उसकी ताइद व नुसरत किस गिरोह के साथ है। हक़ का हक़ होना और बातिल का बातिल होना पूरी तरह वाज़ेह हो गया।

وَاِنْ تَنْتَهُوْا فَهُوَ خَيْرٌ لَّكُمْ ۚ وَاِنْ تَعُوْدُوْا نَعُدْ ۚ

"और अगर अब भी तुम बाज़ आ जाओ तो यह तुम्हारे लिये बेहतर है, और अगर तुम फिर यही करोगे तो हम भी यही कुछ दोबारा करेंगे।"

وَلَنْ تُغْنِيَ عَنْكُمْ فِئَتُكُمْ شَيْـًٔا وَّلَوْ كَثُرَتْ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ مَعَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝١٩

"और तुम्हारी यह जमीअत तुम्हारे किसी काम नहीं आ सकेगी ख्वाह कितनी ही ज़्यादा हो, और यह कि अल्लाह अहले ईमान के साथ है।"

आयात 20 से 28 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَا تَوَلَّوْا عَنْهُ وَاَنْتُمْ تَسْمَعُوْنَ ۝٢٠ وَلَا تَكُوْنُوْا
كَالَّذِيْنَ قَالُوْا سَمِعْنَا وَهُمْ لَا يَسْمَعُوْنَ ۝٢١ اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الصُّمُّ الْبُكْمُ الَّذِيْنَ
لَا يَعْقِلُوْنَ ۝٢٢ وَلَوْ عَلِمَ اللّٰهُ فِيْهِمْ خَيْرًا لَّاَسْمَعَهُمْ ۭ وَلَوْ اَسْمَعَهُمْ لَتَوَلَّوْا وَّهُمْ مُّعْرِضُوْنَ
۝٢٣ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اسْتَجِيْبُوْا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُوْلِ اِذَا دَعَاكُمْ لِمَا يُحْيِيْكُمْ ۚ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ
يَحُوْلُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهٖ وَاَنَّهٗٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۝٢٤ وَاتَّقُوْا فِتْنَةً لَّا تُصِيْبَنَّ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا
مِنْكُمْ خَاۗصَّةً ۚ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝٢٥ وَاذْكُرُوْٓا اِذْ اَنْتُمْ قَلِيْلٌ مُّسْتَضْعَفُوْنَ
فِي الْاَرْضِ تَخَافُوْنَ اَنْ يَّتَخَطَّفَكُمُ النَّاسُ فَاٰوٰىكُمْ وَاَيَّدَكُمْ بِنَصْرِهٖ وَرَزَقَكُمْ مِّنَ
الطَّيِّبٰتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ۝٢٦ يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَخُوْنُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ وَتَخُوْنُوْٓا
اَمٰنٰتِكُمْ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ۝٢٧ وَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَآ اَمْوَالُكُمْ وَاَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ ۙ وَّاَنَّ اللّٰهَ عِنْدَهٗٓ اَجْرٌ
عَظِيْمٌ ۝٢٨

आयत 20

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ
وَلَا تَوَلَّوْا عَنْهُ وَاَنْتُمْ تَسْمَعُوْنَ ۝٢٠

"ऐ अहले ईमान! अल्लाह और उसके रसूल (ﷺ) की इताअत करो और इससे मुहँ ना मोड़ो जबकि तुम सुन रहे हो।"

यानि जब अल्लाह के रसूल ﷺ ने बदर की तरफ़ चलने के इरादा कर लिया तो फिर तुम्हारी तरफ़ से रद्दो क़दा और बहस व इस्तदलाल क्यों हो

रहा था? तुम सबको तो चाहिये था कि अल्लाह और इसके रसूल ﷺ की मरज़ी पर फ़ौरन समीअना व अताअना कहते और आप ﷺ के हुक्म पर सरे तस्लीम ख़म कर देते। यह बात ज़हन में रहे कि यहाँ ख़ास तौर पर उन लोगों की तरफ़ इशारा है जिन्होंने इस मौक़े पर कमज़ोरी दिखाई थी।

आयत 21

وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ قَالُوْا سَمِعْنَا وَهُمْ لَا يَسْمَعُوْنَ ﴿٢١﴾

"और उन लोगों की मानिन्द मत हो जाओ जो कहते हैं हमने सुन लिया और हक़ीक़त में वह सुनते नहीं हैं।"

यानि सिर्फ़ ज़बान से समीअना कह देते हैं मगर उनके दिल अपने ख्यालात और मफ़ादात पर ही डेरे जमाये रहते हैं। इताअत पर इनकी तबियत में यक्सुई पैदा ही नहीं होती। चुनाँचे इस तरह के सुनने की सिरे से कोई हक़ीक़त ही नहीं है।

आयत 22

اِنَّ شَرَّ الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الصُّمُّ الْبُكْمُ الَّذِيْنَ لَا يَعْقِلُوْنَ ﴿٢٢﴾

"यक़ीनन तमाम चौपायों में अल्लाह के नज़दीक बदतरीन वह बहरे गूंगे (इन्सान) हैं जो अक़्ल से काम नहीं लेते।"

यहाँ पर वाज़ेह तौर पर मुनाफ़िक़ीन को बदतरीन जानवर क़रार दिया गया है।

आयत 23

وَلَوْ عَلِمَ اللّٰهُ فِيْهِمْ خَيْرًا لَّاَسْمَعَهُمْ ؕ

"और अगर अल्लाह के इल्म में होता कि इनमें कोई ख़ैर है तो वह इन्हें सुनवा देता।"

وَلَوْ اَسْمَعَهُمْ لَتَوَلَّوْا وَّهُمْ مُّعْرِضُوْنَ ﴿٢٣﴾

"और अगर वह इन्हें (भलाई के बगैर) सुनवा भी देता तो वह ऐराज़ करते हुए पीठ फेर जाते।"

अगर अल्लाह तआला इन लोगों के अंदर कोई सलाहियत पाता तो इनको सुनने और समझने की तौफ़ीक़ दे देता, लेकिन अगर इन्हें बगैर सलाहियत के तामील हुक्म में जंग के लिये निकल आने की तौफ़ीक़ दे भी दी जाती तो ये ख़तरे का मौक़ा देखते ही पीठ फेर कर भाग खड़े होते। यह ख़ास तौर पर उन लोगों के लिये तंबीह है जो कुफ्फ़ार के लश्कर का सामना करने में पसो पेश कर रहे थे।

आयत 24

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوا اسْتَجِيْبُوْا لِلّٰهِ وَلِلرَّسُوْلِ اِذَا دَعَاكُمْ لِمَا يُحْيِيْكُمْ ۚ

"ऐ अहले ईमान! लब्बैक कहा करो अल्लाह और रसूल (ﷺ) की पुकार पर जब वह तुम्हें पुकारें उस शय के लिये जो तुम्हें ज़िन्दगी बख्शने वाली है।"

तुम जंग के लिये जाते हुए समझ रहे हो कि यह मौत का घाट है, जबकि हक़ीक़त यह है कि जिहाद फ़ी सबिलिल्लाह तो असल और अब्दी ज़िन्दगी का दरवाज़ा है। जैसा कि सूरतुल बक़रह (आयत 154) में शहीदों के बारे में फ़रमाया गया: {وَلَا تَقُوْلُوْا لِمَنْ يُّقْتَلُ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ اَمْوَاتٌ ؕ بَلْ اَحْيَآءٌ وَّلٰكِنْ لَّا تَشْعُرُوْنَ} चुनाँचे अल्लाह और उसके रसूल ﷺ जिस चीज़ की तरफ़ तुम्हें बुला रहे हैं, हक़ीक़ी ज़िन्दगी वही है। इसके मुक़ाबले में इस दावत से ऐराज़ कर

के ज़िन्दगी बसर करना गोया हैवानों की सी ज़िन्दगी है, जिसके बारे में हम सूरतुल आराफ़ में पढ़ चुके हैं: { أُولٰٓئِكَ كَالْأَنْعَامِ بَلْ هُمْ أَضَلُّ }

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ يَحُوْلُ بَيْنَ الْمَرْءِ وَقَلْبِهٖ

"और जान रखो कि अल्लाह बन्दे और उसके दिल के दरमियान हाइल हो जाया करता है"

यानि अगर अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की पुकार सुनी-अनसुनी कर दी जाये और उनके अहकामात से बेनियाज़ी को वतीराह बना लिया जाये तो अल्लाह तआला ख़ुद ऐसे बन्दे और हिदायत के दरमियान आड़ बन जाता है, जिससे आइन्दा वह हिदायत की हर बात सुनने और समझने से माज़ूर (लाचार) हो जाता है। इसी मज़मून को सूरतुल बक़रह की आयत 7 में इस तरह बयान किया गया है: { خَتَمَ اللّٰهُ عَلٰى قُلُوْبِهِمْ وَعَلٰى سَمْعِهِمْ ۭ } कि उनके दिलों और उनकी समाअत पर अल्लाह तआला ने मुहर कर दी है। जबकि सूरतुल अनआम की आयत 110 में इस उसूल को सख्त तरीन अल्फ़ाज़ में इस तरह वाज़ेह किया गया है: { وَنُقَلِّبُ اَفْـِٕدَتَهُمْ وَاَبْصَارَهُمْ كَمَا لَمْ يُؤْمِنُوْا بِهٖٓ اَوَّلَ مَرَّةٍ } यानि हक़ के पूरी तरह वाज़ेह होकर सामने आ जाने पर भी जो लोग फ़ौरी तौर पर उसे मानते नहीं और उससे पहलु तही करते हैं तो ऐसे लोगों के दिल उलट दिए जाते हैं और उनकी बसारत पलट दी जाती है। चुनाँचे यह बहुत हस्सास और खौफ़ खाने वाला मामला है। दीन का कोई मुतालबा किसी के सामने आये, अल्लाह का कोई हुक्म उस तक पहुँच जाए और उसका दिल इस पर गवाही भी दे दे कि हाँ यह बात दुरुस्त है, फिर अगर वह उससे ऐराज़ करेगा, कन्नी कतरायेगा, तो इसकी सज़ा उसे इस दुनिया में यूँ भी मिल सकती है कि हक़ को पहचानने की सलाहियत ही उससे सल्ब कर (छीन) ली जाती है, दिल और समाअत पर मुहर लग जाती है, आँखों पर परदे पड़ जाते हैं, हिदायत और उसके दरमियान आड़ कर दी जाती है। यह अल्लाह तआला की सुन्नत और उसका अटल क़ानून है।

وَاَنَّهٗٓ اِلَيْهِ تُحْشَرُوْنَ ۲۴

"और यह कि (बिलआखिर) तुम सबको यक़ीनन उसी की तरफ़ जमा किया जाना है।"

आयत 25

وَاتَّقُوْا فِتْنَةً لَّا تُصِيْبَنَّ الَّذِيْنَ ظَلَمُوْا مِنْكُمْ خَاۗصَّةً ۚ

"और डरो उस फ़ितने से जो तुम में से सिर्फ़ गुनाहगारों ही को अपनी लपेट में नहीं लेगा।"

यह भी क़ानूने ख़ुदावंदी है और इससे पहले भी इस क़ानून का हवाला दिया जा चुका है। यहाँ यह नुक्ता क़ाबिले गौर है कि किसी जुर्म का बराहेरास्त इरतकाब करना ही सिर्फ़ जुर्म नहीं है, बल्कि किसी फ़र्ज़ की अदम अदायगी का फ़अल भी जुर्म के ज़ुमरे में आता है। मसलन एक मुसलमान ज़ाती तौर पर गुनाहों से बच कर भी रहता है और नेकी के कामों में भी हत्तल वसीअ (अपनी हद तक) हिस्सा लेता है। वह सदक़ा व खैरात भी देता है और नमाज़, रोज़ा का अहतमाम भी करता है। यह सब कुछ तो वह करता है मगर दूसरी तरफ़ अल्लाह और उसके दीन की नुसरत, इक़ामते दीन की जद्दो जहद और इस जद्दो जहद में अपने माल और अपने वक़्त की क़ुर्बानी जैसे फ़राइज़ से पहलु तही का रवैय्या अपनाए हुए है तो ऐसा शख्स भी गोया मुजरिम है और अज़ाब की सूरत में वह उसकी लपेट से बच नहीं पाएगा। इस लिहाज़ से यह दिल दहला देने वाली आयत है।

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۲۵

"और जान लो कि अल्लाह सज़ा देने में बहुत सख्त है।"

अब अगली आयत को ख़ुसूसी तौर पर पाकिस्तान के मुसलमानों के हवाले से पढ़ें।

आयत 26

وَاذْكُرُوْٓا اِذْ اَنْتُمْ قَلِيْلٌ مُّسْتَضْعَفُوْنَ فِي الْاَرْضِ

"और याद करो जबकि तुम थोड़ी तादाद में थे और ज़मीन में दबा लिए गए थे"

تَخَافُوْنَ اَنْ يَّتَخَطَّفَكُمُ النَّاسُ

"तुम्हे अंदेशा था कि लोग तुम्हें उचक ले जाएँगे"

यह आयत ख़ास तौर पर मुसलमाने पाकिस्तान पर भी मुन्तबिक़ होती है। बर्रे सगीर में मुसलमान अक़लियत में (अल्पसंख्यक) थे, हिन्दुओं की अक्सरियत के मुक़ाबले में उन्हें खौफ़ था कि वह अपने हुक़ूक़ का तहफ्फ़ुज़ करने में कमज़ोर हैं। अपने जान व माल को दरपेश ख़तरात के अलावा उन्हें यह अंदेशा भी था कि अक्सरियत के हाथों उनका मआशी, समाजी, सियासी, लिसानी, मज़हबी वगैरह हर ऐतबार से इस्तेहसाल (शोषण) होगा।

فَاٰوٰىكُمْ وَاَيَّدَكُمْ بِنَصْرِهٖ وَرَزَقَكُمْ مِّنَ الطَّيِّبٰتِ لَعَلَّكُمْ تَشْكُرُوْنَ ﴿٢٦﴾

"तो अल्लाह ने तुम्हें पनाह की जगह दे दी और तुम्हारी मदद की अपनी ख़ास नुसरत से और तुम्हें बेहतरीन पाकीज़ा रिज़्क़ अता किया, ताकि तुम शुक्र अदा करो।"

आयत 27

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْا لَا تَخُوْنُوا اللّٰهَ وَالرَّسُوْلَ

"ऐ अहले ईमान! मत ख्यानत करो अल्लाह से और रसूल (ﷺ) से"

अल्लाह की अमानत में ख्यानत यक़ीनन बहुत बड़ी ख्यानत है। हमारे पास अल्लाह की सबसे बड़ी अमानत उसकी वह रूह है जो उसने हमारे जिस्मों में फूंक रखी है। इसी के बारे में सूरतुल अहज़ाब में फ़रमाया गया:

اِنَّا عَرَضْنَا الْاَمَانَةَ عَلَى السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضِ وَالْجِبَالِ فَاَبَيْنَ اَنْ يَّحْمِلْنَهَا وَاَشْفَقْنَ مِنْهَا وَحَمَلَهَا الْاِنْسَانُ ۭ اِنَّهٗ كَانَ ظَلُوْمًا جَهُوْلًا ﴿٧٢﴾

"हमने (अपनी) अमानत को आसमानों, ज़मीन और पहाड़ों पर पेश किया तो उन्होंने इसके उठाने से इन्कार कर दिया और वह इससे डर गए, मगर इंसान ने इसे उठा लिया, यक़ीनन वह ज़ालिम और जाहिल था।"

फिर इसके बाद दीन, क़ुरान और शरीअत अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की बड़ी-बड़ी अमानतें हैं जो हमें सौंपी गई हैं। चुनाँचे ईमान का दम भरना, अल्लाह की इताअत और उसके रसूल ﷺ की मोहब्बत का दावा करना, लेकिन फिर अल्लाह के दीन को मगलूब देख कर भी अपने कारोबार, अपनी जायदाद, अपनी मुलाज़मत और अपने कैरियर की फ़िक्र में लगे रहना, अल्लाह और रसूल ﷺ के साथ इससे बड़ी बेवफ़ाई, ग़द्दारी और ख्यानत और क्या होगी!

وَتَخُوْنُوْٓا اَمٰنٰتِكُمْ وَاَنْتُمْ تَعْلَمُوْنَ ﴿٢٧﴾

"और ना ही अपनी (आपस की) अमानतों में ख्यानत करो जानते-बूझते।"

आयत 28

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَآ اَمْوَالُكُمْ وَاَوْلَادُكُمْ فِتْنَةٌ

"और जान लो कि तुम्हारे अमवाल और तुम्हारी औलाद फ़ितना हैं"

फ़ितने के मायने आज़माइश और उस कसौटी के हैं जिस पर किसी को परख़ा जाता है। इस लिहाज़ से माल और औलाद इन्सान के लिये बहुत

बड़ी आज़माइश हैं। यक़ीनन माल और औलाद ही इंसान के पाँव की सबसे बड़ी बेड़ियाँ हैं जो उसे नुसरते दीन की जद्दो जहद से रोक कर उसकी आक़बत ख़राब करती है। चुनाँचे वह अपनी शऊरी और फ़आल ज़िन्दगी के शबो-रोज़ माल कमाने, उसे सेंत-सेंत कर रखने और औलाद के मुस्तक़बिल को महफ़ूज़ बनाने में इस अंदाज़ से खपा देता है कि उसमें और कोल्हू के बैल में कोई फ़र्क़ नहीं रह जाता। इसके बाद उसके जिस्म में ज़िंदगी की कोई रमक़ बाक़ी बचती ही नहीं जिसे वह दीन के जद्दो जहद के लिये पेश करके अपने अल्लाह के हुज़ूर सुर्ख रू हो सके।

وَّاَنَّ اللّٰهَ عِنۡدَهٗۤ اَجۡرٌ عَظِيۡمٌ ﴿۲۸﴾

"और यह कि अल्लाह ही के पास है बड़ा अजर।"

आयात 29 से 40 तक

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡۤا اِنۡ تَتَّقُوا اللّٰهَ يَجۡعَلۡ لَّكُمۡ فُرۡقَانًا وَّيُكَفِّرۡ عَنۡكُمۡ سَيِّاٰتِكُمۡ وَيَغۡفِرۡ لَكُمۡ ؕ وَاللّٰهُ ذُو الۡفَضۡلِ الۡعَظِيۡمِ ﴿۲۹﴾ وَاِذۡ يَمۡكُرُ بِكَ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا لِيُثۡبِتُوۡكَ اَوۡ يَقۡتُلُوۡكَ اَوۡ يُخۡرِجُوۡكَ ؕ وَيَمۡكُرُوۡنَ وَيَمۡكُرُ اللّٰهُ ؕ وَاللّٰهُ خَيۡرُ الۡمٰكِرِيۡنَ ﴿۳۰﴾ وَاِذَا تُتۡلٰى عَلَيۡهِمۡ اٰيٰتُنَا قَالُوۡا قَدۡ سَمِعۡنَا لَوۡ نَشَآءُ لَقُلۡنَا مِثۡلَ هٰذَاۙ اِنۡ هٰذَاۤ اِلَّاۤ اَسَاطِيۡرُ الۡاَوَّلِيۡنَ ﴿۳۱﴾ وَاِذۡ قَالُوا اللّٰهُمَّ اِنۡ كَانَ هٰذَا هُوَ الۡحَقَّ مِنۡ عِنۡدِكَ فَاَمۡطِرۡ عَلَيۡنَا حِجَارَةً مِّنَ السَّمَآءِ اَوِ ائۡتِنَا بِعَذَابٍ اَلِيۡمٍ ﴿۳۲﴾ وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمۡ وَاَنۡتَ فِيۡهِمۡ ۚ وَمَا كَانَ اللّٰهُ مُعَذِّبَهُمۡ وَهُمۡ يَسۡتَغۡفِرُوۡنَ ﴿۳۳﴾ وَمَا لَهُمۡ اَلَّا يُعَذِّبَهُمُ اللّٰهُ وَهُمۡ يَصُدُّوۡنَ عَنِ الۡمَسۡجِدِ الۡحَرَامِ وَمَا كَانُوۡۤا اَوۡلِيَآءَهٗ ؕ اِنۡ اَوۡلِيَآؤُهٗۤ اِلَّا الۡمُتَّقُوۡنَ وَلٰكِنَّ اَكۡثَرَهُمۡ لَا يَعۡلَمُوۡنَ ﴿۳۴﴾ وَمَا كَانَ صَلَاتُهُمۡ عِنۡدَ الۡبَيۡتِ اِلَّا مُكَآءً وَّتَصۡدِيَةً ؕ فَذُوۡقُوا الۡعَذَابَ بِمَا كُنۡتُمۡ تَكۡفُرُوۡنَ ﴿۳۵﴾ اِنَّ الَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا يُنۡفِقُوۡنَ اَمۡوَالَهُمۡ لِيَصُدُّوۡا عَنۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ ؕ فَسَيُنۡفِقُوۡنَهَا ثُمَّ تَكُوۡنُ عَلَيۡهِمۡ حَسۡرَةً ثُمَّ يُغۡلَبُوۡنَ ؕ وَالَّذِيۡنَ كَفَرُوۡۤا اِلٰى جَهَنَّمَ يُحۡشَرُوۡنَ ﴿۳۶﴾ لِيَمِيۡزَ اللّٰهُ الۡخَبِيۡثَ مِنَ الطَّيِّبِ وَيَجۡعَلَ الۡخَبِيۡثَ بَعۡضَهٗ عَلٰى بَعۡضٍ فَيَرۡكُمَهٗ جَمِيۡعًا فَيَجۡعَلَهٗ فِىۡ جَهَنَّمَ ؕ اُولٰٓئِكَ هُمُ الۡخٰسِرُوۡنَ ﴿۳۷﴾ قُلۡ لِّلَّذِيۡنَ كَفَرُوۡۤا اِنۡ يَّنۡتَهُوۡا يُغۡفَرۡ لَهُمۡ مَّا قَدۡ سَلَفَ ۚ وَاِنۡ يَّعُوۡدُوۡا فَقَدۡ مَضَتۡ سُنَّةُ الۡاَوَّلِيۡنَ ﴿۳۸﴾ وَقَاتِلُوۡهُمۡ حَتّٰى لَا تَكُوۡنَ فِتۡنَةٌ وَّيَكُوۡنَ الدِّيۡنُ كُلُّهٗ لِلّٰهِ ۚ فَاِنِ انۡتَهَوۡا فَاِنَّ اللّٰهَ بِمَا يَعۡمَلُوۡنَ بَصِيۡرٌ ﴿۳۹﴾ وَاِنۡ تَوَلَّوۡا فَاعۡلَمُوۡۤا اَنَّ اللّٰهَ مَوۡلٰىكُمۡ ؕ نِعۡمَ الۡمَوۡلٰى وَنِعۡمَ النَّصِيۡرُ ﴿۴۰﴾

आयत 29

يٰۤاَيُّهَا الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡۤا اِنۡ تَتَّقُوا اللّٰهَ يَجۡعَلۡ لَّكُمۡ فُرۡقَانًا

"ऐ अहले ईमान! अगर तुम अल्लाह के तक़वे पर बरक़रार रहोगे तो वह तुम्हारे लिये फ़ुरक़ान पैदा कर देगा"

अगर तुम तक़वे की रविश इख्तियार करोगे तो अल्लाह की तरफ़ से एक बाद दीगर तुम्हारे लिये फ़ुरक़ान आता रहेगा। जैसे पहला फ़ुरक़ान गज़वा-ए-बदर में तुम्हारी फ़तह की सूरत में आ गया।

وَّيُكَفِّرۡ عَنۡكُمۡ سَيِّاٰتِكُمۡ وَيَغۡفِرۡ لَكُمۡ ؕ وَاللّٰهُ ذُو الۡفَضۡلِ الۡعَظِيۡمِ ﴿۲۹﴾

"और दूर कर देगा तुमसे तुम्हारी बुराईयाँ (कमज़ोरियाँ) और तुम्हें बख्श देगा। और अल्लाह बड़े फ़ज़ल वाला है।"

आयत 30

وَاِذْ يَمْكُرُ بِكَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

"और याद कीजिये जब कुफ्फ़ार आप ﷺ के ख़िलाफ़ साज़िशें कर रहे थे"

لِيُثْبِتُوْكَ اَوْ يَقْتُلُوْكَ اَوْ يُخْرِجُوْكَ ؕ

"कि आप ﷺ को क़ैद कर दें या क़त्ल कर दें या (मक्के से) निकाल दें।"

यह उन साज़िशों का ज़िक्र है जो क़ुरैशे मक्का हिजरत से पहले के ज़माने में रसूल अल्लाह ﷺ के ख़िलाफ़ कर रहे थे। आप ﷺ की मुखालफ़त में उनके बाक़ी तमाम हरबे नाकाम हो गए तो वह (नाउज़ु बिल्लाह) आप ﷺ के क़त्ल के दर पे हो गए और इस बारे में संजीदगी से सलाह मशवरे करने लगे।

وَيَمْكُرُوْنَ وَيَمْكُرُ اللّٰهُ ؕ وَاللّٰهُ خَيْرُ الْمٰكِرِيْنَ ۝۳۰

"वह भी चालें चल रहे थे और अल्लाह भी मंसूबा बंदी कर रहा था। अल्लाह बेहतरीन मंसूबा बंदी करने वाला है।"

आयत 31

وَاِذَا تُتْلٰى عَلَيْهِمْ اٰيٰتُنَا قَالُوْا قَدْ سَمِعْنَا لَوْ نَشَآءُ لَقُلْنَا مِثْلَ هٰذَآ ۙ اِنْ هٰذَآ اِلَّاۤ اَسَاطِيْرُ الْاَوَّلِيْنَ ۝۳۱

"और जब उन्हें हमारी आयात पढ़ कर सुनाई जाती है तो वह कहते हैं बहुत सुन लिया हमने (यह कलाम), अगर हम चाहें तो ऐसा कलाम हम भी कह दें, यह कुछ नहीं सिवाय पिछले लोगों की कहानियों के।"

तारीख़ और सीरत की क़िताबों में यह क़ौल नज़र बिन हारिस से मंसूब है। लेकिन उनकी इस तरह की बातें सिर्फ़ कहने की हद तक थीं। अल्लाह की तरफ़ से उन लोगों को बार-बार यह चैलेंज दिया गया कि अगर तुम लोग इस क़ुरान को अल्लाह तआला की तरफ़ से नाज़िल शुदा नहीं समझते तो तुम भी इसी तरह का कलाम बना कर ले आओ और किसी सालिस (तीसरे) से फ़ैसला करा लो, मगर वह लोग इस चैलेंज को क़ुबूल करने की कभी जुर्रात ना कर सके। इसी तरह पिछली सदी तक आम मुस्तशरिक़ीन भी यह इल्ज़ाम लगाते रहे हैं कि मुहम्मद (ﷺ) ने तौरात और इन्जील से मालूमात लेकर क़ुरान बनाया है, मगर आज-कल चूँकि तहक़ीक़ का दौर है, इसलिये उनके ऐसे बेतुके इल्ज़ामात ख़ुद-ब-ख़ुद ही कम हो गए हैं।

आयत 32

وَاِذْ قَالُوا اللّٰهُمَّ اِنْ كَانَ هٰذَا هُوَ الْحَقَّ مِنْ عِنْدِكَ فَاَمْطِرْ عَلَيْنَا حِجَارَةً مِّنَ السَّمَآءِ اَوِ ائْتِنَا بِعَذَابٍ اَلِيْمٍ ۝۳۲

"और जब उन्होंने कहा कि ऐ अल्लाह! अगर यह (क़ुरान) तेरी ही तरफ़ से बरहक़ है तो बरसा दे हम पर पत्थर आसमान से या भेज दे हम पर कोई दर्दनाक अज़ाब।"

जैसा कि पहले भी ज़िक्र हो चुका है कि सरदाराने क़ुरैश के लिये सबसे बड़ा मसला यह पैदा हो गया था कि मक्के के आम लोगों को मुहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ की दावत के असरात से कैसे महफ़ूज़ रखा जाए। इसके लिये वह मुख्तलिफ़ क़िस्म की तदबीरें करते रहते थे, जिनका ज़िक्र क़ुरान में भी मुतअद्दिद बार हुआ है। इस आयत में उनकी ऐसी ही एक तदबीर का तज़किरा है। उनके बड़े-बड़े सरदार अवाम की इज्तमाआत में अल्ल ऐलान इस तरह की बातें करते थे कि अगर यह क़ुरान अल्लाह ही की तरफ़ से नाज़िल करदा है और हम इसका इन्कार कर रहे हैं तो हम पर अल्लाह की तरफ़ से अज़ाब क्यों नही आ जाता? बल्कि वह अल्लाह को मुख़ातिब करके दुआइया अंदाज़ में भी पुकारते थे कि ऐ अल्लाह! अगर यह क़ुरान तेरा ही कलाम है तो फिर इसका इन्कार करने के सबब हमारे ऊपर आसमान से पत्थर बरसा दे, या किसी भी शक्ल में हम पर अपना अज़ाब नाज़िल फ़रमा दे। और इसके बाद वह अपनी इस तदबीर की ख़ूब तश्हीर करते कि देखा

हमारी इस दुआ का कुछ भी रद्दे अमल नहीं हुआ, अगर यह वाक़ई अल्लाह का कलाम होता तो हम पर अब तक अज़ाब आ चुका होता। चुनाँचे इस तरह वह अपने अवाम को मुत्मईन करने की कोशिश करते थे।

आयत 33

وَمَا كَانَ اللّٰهُ لِيُعَذِّبَهُمْ وَاَنْتَ فِيْهِمْ ۚ

"और अल्लाह ऐसा ना था कि उनको अज़ाब देता जबकि (अभी) आप ﷺ उनके दरमियान मौजूद थे।"

अगरचे वह लोग अज़ाब के पूरी तरह मुस्तहिक़ हो चुके थे, लेकिन जिस तरह के अज़ाब के लिये वह लोग दुआएँ कर रहे थे वैसा अज़ाब सुन्नते इलाही के मुताबिक़ उन पर उस वक़्त तक नहीं आ सकता था जब तक अल्लाह के रसूल ﷺ मक्के में उनके दरमियान मौजूद थे, क्योंकि ऐसे अज़ाब के नुज़ूल से पहले अल्लाह तआला अपने रसूल और अहले ईमान को हिजरत का हुक्म दे देता है और उनके निकल जाने के बाद ही किसी आबादी पर इज्तमाई अज़ाब आया करता है।

وَمَا كَانَ اللّٰهُ مُعَذِّبَهُمْ وَهُمْ يَسْتَغْفِرُوْنَ ﴿٣٣﴾

"और अल्लाह उनको अज़ाब देने वाला नहीं था जबकि वह इस्तगफ़ार भी कर रहे थे।"

इस लिहाज़ से मक्के की आबादी का मामला बहुत गडमड था। मक्के में अवामुन्नास (आम लोग) भी थे, सादा लौ लोग भी थे जो अपने तौर पर अल्लाह का ज़िक्र करते थे, तल्बिया पढ़ते थे और अल्लाह से इस्तगफ़ार भी करते थे। दूसरी तरफ़ अल्लाह का क़ानून है जिसका ज़िक्र इसी सूरत की आयत 37 में हुआ है कि जब तक वह पाक और नापाक को छांट कर अलग नहीं कर देता {لِيَمِيْزَ اللّٰهُ الْخَبِيْثَ مِنَ الطَّيِّبِ} उस वक़्त तक इस नौइयत का अज़ाब किसी क़ौम पर नहीं आता।

आयत 34

وَمَا لَهُمْ اَلَّا يُعَذِّبَهُمُ اللّٰهُ وَهُمْ يَصُدُّوْنَ عَنِ الْمَسْجِدِ الْحَرَامِ

"और क्या (रुकावट) है उनके लिये कि अल्लाह उनको अज़ाब ना दे जबकि वह रोक रहे हैं मस्जिदे हराम से (लोगों को)"

وَمَا كَانُوْٓا اَوْلِيَآءَهٗ ۭ اِنْ اَوْلِيَآؤُهٗٓ اِلَّا الْمُتَّقُوْنَ وَلٰكِنَّ اَكْثَرَهُمْ لَا يَعْلَمُوْنَ ﴿٣٤﴾

"दर हालाँकि वह उसके मुतवल्ली भी नहीं हैं। उसके (असल) मुतवल्ली तो सिर्फ़ मुत्तक़ी लोग हैं, लेकिन उनकी अक्सरियत इल्म नहीं रखती।"

आयत 35

وَمَا كَانَ صَلَاتُهُمْ عِنْدَ الْبَيْتِ اِلَّا مُكَاۗءً وَّتَصْدِيَةً ۭ

"और नहीं है उनकी नमाज़ बैतुल्लाह के पास सिवाय सीटियाँ बजाना और तालियाँ पीटना।"

क़ुरैशे मक्का ने अपनी इबादात का हुलिया इस तरह बिगाड़ा था कि अपनी नमाज़ में सीटियों और तालियों जैसी खुराफ़ात भी शामिल कर रखी थीं। इसी तरह खाना काबा का सबसे आला तवाफ़ उनके नज़दीक वह था जो बिल्कुल बरहना (नंगा) होकर किया जाता।

فَذُوْقُوا الْعَذَابَ بِمَا كُنْتُمْ تَكْفُرُوْنَ ﴿٣٥﴾

"तो अब चखो मज़ा अज़ाब का अपने कुफ़्र की पादाश में।"

यहाँ वाज़ेह कर दिया गया कि अल्लाह का अज़ाब सिर्फ़ आसमान से पत्थरों की सूरत ही में नहीं आया करता बल्कि गज़वा-ए-बदर में उनकी फ़ैसलाकुन शिकस्त उनके हक़ में अल्लाह का अज़ाब है।

आयत 36

"यक़ीनन काफ़िर लोग अपने अमवाल खर्च करते हैं ताकि (लोगों को) रोकें अल्लाह के रास्ते से।"

اِنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا يُنْفِقُوْنَ اَمْوَالَهُمْ لِيَصُدُّوْا عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ

क़ुरैश की तरफ़ से लश्कर की तैयारी, साज़ो सामान की फ़राहमी, अस्लाह की ख़रीदारी, ऊँटों, घोड़ों और राशन वगैरह का बंदोबस्त भी इस क़िस्म के इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिश्शैतान और फ़ी सबीलिश्शिर्क की मिसाल है। वह लोग गोया शैतान के रास्ते के मुजाहिदीन थे और अल्लाह की मख्लूक़ को उसके रास्ते से रोकना उनका मिशन था।

"तो वह (और भी) खर्च करेंगे, फिर यह उनके लिये एक हसरत बन जायेगा, फिर यह मग़लूब होकर रहेंगे।"

فَسَيُنْفِقُوْنَهَا ثُمَّ تَكُوْنُ عَلَيْهِمْ حَسْرَةً ثُمَّ يُغْلَبُوْنَ ؕ

यह खर्च करना उनके लिये मौजब-ए-हसरत होगा और यह पछतावा उनकी जानों का रोग बन जायेगा कि अपना माल भी खपा दिया, जानें भी ज़ाया कर दीं, लेकिन इस पूरी कोशिश के बावजूद मोहम्मद ﷺ का बाल भी बांका ना कर सके। उनकी यह हसरतें उस वक़्त और भी बढ़ जायेगी जब {وَقُلْ جَآءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ ۭ اِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ زَهُوْقًا} (बनी इसराइल) की तफ़सीर अमली तौर पर उनके सामने आ जायेगी और वह मग़लूब होकर अहले हक़ के सामने उनके रहमो करम की भीख माँग रहे होंगे।

"और जो कुफ़्र पर रहेंगे वह जहन्नम की तरफ़ घेर कर ले जाए जायेंगे।"

وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِلٰى جَهَنَّمَ يُحْشَرُوْنَ ۝٣٦

यानि उनमें से जो लोग ईमान ले आएँगे अल्लाह तआला उन्हें माफ़ कर देगा, और जो कुफ़्र पर अड़े रहेंगे और कुफ़्र पर ही उनकी मौत आएगी तो ऐसे लोग जहन्नम का ईंधन बनेंगे।

आयत 37

"ताकि अल्लाह पाक को नापाक से (छांट कर) अलैहदा कर दे और नापाक को एक दूसरे के ऊपर रखते हुए सबको एक ढेर बना दे, फिर उसको जहन्नम में झोंक दे।"

لِيَمِيْزَ اللّٰهُ الْخَبِيْثَ مِنَ الطَّيِّبِ وَيَجْعَلَ الْخَبِيْثَ بَعْضَهٗ عَلٰى بَعْضٍ فَيَرْكُمَهٗ جَمِيْعًا فَيَجْعَلَهٗ فِيْ جَهَنَّمَ ؕ

"यक़ीनन यही लोग हैं ख़सारा पाने वाले।"

اُولٰٓئِكَ هُمُ الْخٰسِرُوْنَ ۝٣٧

आयत 38

"(ऐ मोहम्मद ﷺ!) आप ऐलान कर दीजिये इन काफ़िरों के सामने कि अगर वह अब भी बाज़ आ जाएँ तो जो कुछ पहले हो चुका है वह इनके लिये माफ़ कर दिया जाएगा।"

قُلْ لِّلَّذِيْنَ كَفَرُوْٓا اِنْ يَّنْتَهُوْا يُغْفَرْ لَهُمْ مَّا قَدْ سَلَفَ ۚ

यानि अब भी मौक़ा है कि ईमान ले आओ तो तुम्हारी पहली तमाम खताएँ माफ़ कर दी जाएँगी।

"और अगर वह दोबारा यही कुछ करेंगे तो पिछलों के हक़ में सुन्नते इलाही गुज़र चुकी है।"

وَاِنْ يَّعُوْدُوْا فَقَدْ مَضَتْ سُنَّةُ الْاَوَّلِيْنَ ۝٣٨

इन्हें सब मालूम है कि जिन क़ौमों ने अपने रसूलों का इन्कार किया था उनका क्या अंजाम हुआ था। सूरतुल अन्फ़ाल से पहले मक्की क़ुरान तो पूरे का पूरा नाज़िल हो चुका था, सूरतुल अनआम और सूरतुल आराफ़ भी नाज़िल हो चुकी थीं। लिहाज़ा क़ौमे नूह, क़ौमे हूद, क़ौमे सालेह, क़ौमे शुएब और क़ौमे लूत (अलै०) के इबरतनाक अंजाम की तफ़सीलात सबको मालूम हो चुकी थीं।

आयत 39

وَقَاتِلُوْهُمْ حَتّٰى لَا تَكُوْنَ فِتْنَةٌ وَّيَكُوْنَ الدِّيْنُ كُلُّهٗ لِلّٰهِ ۚ

"और (ऐ मुसलमानों!) इनसे जंग करते रहो यहाँ तक कि फ़ितना (कुफ़्र) बाक़ी ना रहे और दीन कुल का कुल अल्लाह ही का हो जाए।"

यही हुक्म सूरतुल बक़रह की आयत 193 में भी आ चुका है। अलबत्ता यहाँ इसके अल्फ़ाज़ में "कुल्लुहू" की इज़ाफ़ी शान और मज़ीद ताकीद पाई जाती है। यानि ऐ मुसलमानों! तुम्हारी तहरीक को शुरू हुए पन्द्रह बरस हो गए। इस दौरान में दावत, तंज़ीम, तरबियत और सबरे महज़ के मराहिल कामयाबी से तय हो चुके हैं। चुनाँचे अब passive resistance का दौर ख़त्म समझो। नबी अकरम ﷺ की तरफ़ से इक़दाम (active resistance) का आग़ाज़ हो चुका है और इस इक़दाम के नतीजे में अब यह तहरीक मुसल्लह तसादुम (armed conflict) के मरहले में दाखिल हो गई है। लिहाज़ा जब एक दफ़ा तलवारें तलवारों से टकरा चुकी हैं तो तुम्हारी यह तलवारें अब वापस मियानों में उस वक़्त तक नहीं जाएँगी जब तक यह काम मुकम्मल ना हो जाए और इस काम की तकमील का तक़ाज़ा यह है कि फ़ितना बिल्कुल ख़त्म हो जाए। "फ़ितना" किसी मआशरे के अन्दर बातिल के गलबे की कैफ़ियत का नाम है जिसकी वजह से उस मआशरे के लोगों के लिये ईमान पर क़ायम रहना और अल्लाह के अहकामात पर अमल करना मुश्किल हो जाता है। लिहाज़ा यह जंग अब उस वक़्त तक जारी रहेगी जब तक बातिल मुकम्मल तौर पर मगलूब और अल्लाह का दीन पूरी तरह से ग़ालिब ना हो जाए। अल्लाह के दीन का यह गलबा जुज़्वी तौर पर भी क़ाबिले क़ुबूल नहीं बल्कि दीन कुल का कुल अल्लाह के ताबेअ होना चाहिये।

فَاِنِ انْتَهَوْا فَاِنَّ اللّٰهَ بِمَا يَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ ۝٣٩

"फ़िर अगर वह बाज़ आ जाएँ तो जो कुछ वह कर रहे हैं अल्लाह यक़ीनन उसको देख रहा है।"

आयत 40

وَاِنْ تَوَلَّوْا فَاعْلَمُوْٓا اَنَّ اللّٰهَ مَوْلٰىكُمْ ۭ نِعْمَ الْمَوْلٰى وَنِعْمَ النَّصِيْرُ ۝٤٠

"और अगर वह रूगरदानी करें तो (ऐ मुसलमानों!) तुम यह जान लो कि अल्लाह तुम्हारा मौला (हिमायती) है। क्या ही ख़ूब है वह मौला और क्या ही ख़ूब है वह मददगार!"

आयात 41 से 44 तक

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِّنْ شَيْءٍ فَاَنَّ لِلّٰهِ خُمُسَهٗ وَلِلرَّسُوْلِ وَلِذِي الْقُرْبٰى وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ وَابْنِ السَّبِيْلِ ۙ اِنْ كُنْتُمْ اٰمَنْتُمْ بِاللّٰهِ وَمَآ اَنْزَلْنَا عَلٰي عَبْدِنَا يَوْمَ الْفُرْقَانِ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ ۭ وَاللّٰهُ عَلٰي كُلِّ شَيْءٍ قَدِيْرٌ ۝٤١ اِذْ اَنْتُمْ بِالْعُدْوَةِ الدُّنْيَا وَهُمْ بِالْعُدْوَةِ الْقُصْوٰى وَالرَّكْبُ اَسْفَلَ مِنْكُمْ ۭ وَلَوْ تَوَاعَدْتُّمْ لَاخْتَلَفْتُمْ فِي الْمِيْعٰدِ ۙ وَلٰكِنْ لِّيَقْضِيَ اللّٰهُ اَمْرًا كَانَ مَفْعُوْلًا ۙ لِّيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْۢ بَيِّنَةٍ وَّيَحْيٰى مَنْ حَيَّ عَنْۢ بَيِّنَةٍ ۭ وَاِنَّ اللّٰهَ لَسَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝٤٢ اِذْ يُرِيْكَهُمُ اللّٰهُ فِيْ مَنَامِكَ قَلِيْلًا

ۙوَلَوْ اَرٰىكَهُمْ كَثِيْرًا لَّفَشِلْتُمْ وَلَتَنَازَعْتُمْ فِى الْاَمْرِ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ سَلَّمَ ۗ اِنَّهٗ عَلِيْمٌۢ
بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ﴿٤٣﴾ وَاِذْ يُرِيْكُمُوْهُمْ اِذِ الْتَقَيْتُمْ فِىْٓ اَعْيُنِكُمْ قَلِيْلًا وَّيُقَلِّلُكُمْ فِىْٓ
اَعْيُنِهِمْ لِيَقْضِىَ اللّٰهُ اَمْرًا كَانَ مَفْعُوْلًا ۗ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ ﴿٤٤﴾

आयत 41

وَاعْلَمُوْٓا اَنَّمَا غَنِمْتُمْ مِّنْ شَىْءٍ فَاَنَّ لِلّٰهِ
خُمُسَهٗ وَلِلرَّسُوْلِ وَلِذِى الْقُرْبٰى

"और जान लो कि जो भी ग़नीमत तुम्हें हासिल हुई है उसका ख़ुम्स (पाँचवां हिस्सा) तो अल्लाह के लिये, अल्लाह के रसूल के लिये और (रसूल के) क़राबतदारों के लिये है"

इस आयत में माले ग़नीमत का हुक्म बयान हो रहा है। वाज़ेह रहे कि बेअसत के बाद से रसूल अल्लाह ﷺ का ज़रिया-ए-मआश कोई नहीं था। शादी के बाद हज़रत ख़दीजा रज़ि. ने अपनी सारी दौलत हर क़िस्म के तसर्रुफ़ के लिये आप ﷺ को पेश कर दी थी। जब तक आप ﷺ मक्का में रहे, किसी ना किसी तरह इसी सरमाये से आपके ज़ाती अखराजात चलते रहे, लेकिन हिजरत के बाद इस सिलसिले में कोई मुस्तक़िल इंतेज़ाम नहीं था। फिर आप ﷺ के क़राबतदार और अहलो अयाल भी थे जिनकी कफ़ालत आप ﷺ के ज़िम्मे थी। इन सब अखराजात के लिये ज़रूरी था कि कोई माक़ूल और मुस्तक़िल इंतेज़ाम कर दिया जाए। चुनाँचे गनाइम में से पाँचवां हिस्सा मुस्तक़िल तौर पर बैतुलमाल को दे दिया गया और आपके ज़ाती अखराजात, अज़वाजे मुताहरात रज़ि. का नान-नफ़क़ा और आपके क़राबतदारों की कफ़ालत बैतुलमाल के ज़िम्मे तय पाई।

وَالْيَتٰمٰى وَالْمَسٰكِيْنِ وَابْنِ السَّبِيْلِ

"और (इसमें हिस्सा होगा) यतीमों, मिस्कीनों और मुसाफ़िरों के लिये (भी)"

इसी पाँचवें हिस्से में से मआशरे के महरूम अफ़राद की मदद भी की जायगी।

اِنْ كُنْتُمْ اٰمَنْتُمْ بِاللّٰهِ وَمَآ اَنْزَلْنَا عَلٰى
عَبْدِنَا يَوْمَ الْفُرْقَانِ يَوْمَ الْتَقَى الْجَمْعٰنِ ۗ

"अगर तुम ईमान रखते हो अल्लाह पर और उस शय पर जो हमने नाज़िल की अपने बन्दे पर फ़ैसले के दिन, जिस दिन दो फ़ौजों का टकराव हुआ था।"

وَاللّٰهُ عَلٰى كُلِّ شَىْءٍ قَدِيْرٌ ﴿٤١﴾

"और अल्लाह हर शय पर क़ादिर है।"

फ़ैसले (गज़वा-ए-बदर) के दिन जो शय खुसूसी तौर पर नाज़िल की गई वह गैबी इमदाद और नुसरते इलाही थी। अल्लाह तआला ने वादा फ़रमाया था कि तुम्हारी मदद के लिये फ़रिश्ते आयेंगे। वह फ़रिश्ते अगरचे किसी को नज़र तो नहीं आते थे, लेकिन जैसे तुम लोग बहुत सी दूसरी चीज़ों पर ईमान बिल गैब रखते हो, अल्लाह पर और उसकी वही पर ईमान रखते हो, जिबराइल अलै. के वही लाने पर ईमान रखते हो और इस क़ुरान के मुनज़्ज़ल मिनल्लाह होने पर ईमान रखते हो, इसी तरह तुम्हारा यह ईमान भी होना चाहिये कि अल्लाह ने अपना वादा पूरा कर दिया जो उसने अपने रसूल ﷺ और मुसलमानों की मदद के सिलसिले में किया था और यह कि तुम्हारी यह फ़तह अल्लाह की मदद से ही मुम्किन हुई है। अगर तुम लोगों का इस हक़ीक़त पर यक़ीने कामिल है तो फिर अल्लाह का यह फ़ैसला भी दिल की आमादगी और ख़ुशी से क़ुबूल कर लो कि माले ग़नीमत में से पाँचवां हिस्सा अल्लाह, उसके रसूल और बैतुलमाल का होगा।

इस हुक्म के नाज़िल होने के बाद तमाम माले ग़नीमत एक जगह जमा किया गया और उसमें से पाँचवां हिस्सा बैतुलमाल के लिये निकाल कर बाक़ी चार हिस्से मुजाहिदीन में तक़सीम कर दिए गए। उसमें से हर उस शख़्स को बराबर का हिस्सा मिला जो लश्कर में जंग के लिये शामिल था, क़तअ नज़र इसके कि किसी ने अमली तौर पर क़िताल किया था या नहीं

किया था और क़तअ नज़र इसके कि किसी ने बहुत सा माले ग़नीमत जमा किया था या किसी ने कुछ भी जमा नहीं किया था। अलबत्ता इस तक़सीम में सवार के दो हिस्से रखे गए और पैदल के लिये एक हिस्सा। इसलिये कि सवारियों के जानवर मुहैय्या करने और उन जानवरों पर उठने वाले अखराजात मुताल्क़ा अफ़राद ज़ाती तौर पर बर्दाश्त करते थे।

आयत 42

"जब तुम लोग थे क़रीब वाले किनारे पर और वह लोग थे दूर वाले किनारे पर"

اِذْ اَنْتُمْ بِالْعُدْوَةِ الدُّنْيَا وَهُمْ بِالْعُدْوَةِ الْقُصْوٰى

वादी-ए-बदर दोनों ऐतराफ़ से तंग है जबकि दरमियान में मैदान की शक्ल इख्तियार कर लेती है। इस वादी का एक तंग किनारा शिमाल की तरफ़ है जहाँ से शाम की तरफ़ रास्ता निकलता है और दूसरा किनारा जुनूब की तरफ़ है जहाँ से मक्के को रास्ता जाता है। वादी में से एक रास्ता मशरिक़ की सिम्त भी निकलता है जो मदीने की तरफ़ जाता है। लिहाज़ा पुराने ज़माने में हाजियों के ज़्यादा तर क़ाफ़िले वादी-ए-बदर से ही गुज़रते थे। अब नई मोटर वे "तरीक़ुल हिजरत" बन जाने से लोगों को इन मक़ामात से गुज़रने का मौक़ा नहीं मिलता। गज़वा-ए-बदर के मौक़े पर अल्लाह तआला की तरफ़ से ऐसी तदबीर का ज़हूर हुआ कि दोनों लश्कर वादी-ए-बदर में एक साथ पहुँचे। यहाँ उसी का ज़िक्र है कि जब क़ुरैश का लश्कर वादी के दूर वाले (जुनूबी) किनारे पर आ पहुँचा और मशरिक़ की जानिब से हुज़ूर ﷺ अपना लश्कर लेकर उस किनारे पर पहुँच गए जो मदीने से क़रीब था।

"और क़ाफ़िला तुमसे नीचे था।"

وَالرَّكْبُ اَسْفَلَ مِنْكُمْ ؕ

क़ुरैश का तिजारती क़ाफ़िला उस वक़्त नीचे साहिल समन्दर की तरफ़ से होकर गुज़र रहा था। अबु सूफ़ियान ने एक तरफ़ तो क़ाफ़िले की हिफ़ाज़त के लिये मक्के वालों को पैग़ाम भेज दिया था और दूसरी तरफ़ असल रास्ते को छोड़ दिया था जो वादी-ए-बदर से होकर गुज़रता था और अब यह क़ाफ़िला साहिल समन्दर के साथ-साथ सफ़र करते हुए आगे बढ़ रहा था। बदर के पहाड़ी सिलसिले से आगे तहामा का मैदान है जो साहिल समन्दर तक फैला हुआ है। और क़ाफ़िला उस वक़्त उस मैदान के भी आखरी हुदूद पर समन्दर की जानिब था। इसलिये फ़रमाया गया कि क़ाफ़िला तुमसे निचली सतह पर था।

"और अगर तुम लोग आपस में मीआद ठहरा कर निकलते तो भी वक़्ते मुक़र्ररा (पर पहुँचने) में तुम ज़रूर मुख्तलिफ़ हो जाते"

وَلَوْ تَوَاعَدْتُّمْ لَاخْتَلَفْتُمْ فِي الْمِيْعٰدِ ۙ

यानि यह तो अल्लाह की मशियत के तहत दोनों लश्कर ठीक एक ही वक़्त पर वादी के दोनों किनारों पर पहुँचे थे। अगर आप लोगों ने मक़ामे मुअययन पर पहुँचने के लिये आपस में कोई वक़्त मुक़र्रर किया होता तो उसमें ज़रूर तक़दीम व ताखीर हो जाती, लेकिन हमने दोनों लश्करों को ऐन वक़्त पर एक साथ आमने-सामने ला खड़ा किया, क्योंकि हम चाहते थे कि यह टकराव हो जाए और अहले मक्का पर यह बात वाज़ेह हो जाए कि अल्लाह तआला की नुसरत किसके साथ है।

"लेकिन (यह सब कुछ इसलिये हुआ) ताकि अल्लाह फ़ैसला कर दे उस काम का जो होने ही वाला था"

وَلٰكِنْ لِّيَقْضِيَ اللّٰهُ اَمْرًا كَانَ مَفْعُوْلًا ۙ

لِّيَهْلِكَ مَنْ هَلَكَ عَنْۢ بَيِّنَةٍ

"ताकि जिसे हलाक होना है वह हलाक हो बात वाज़ेह हो जाने के बाद"

यानि हक़ के वाज़ेह हो जाने में कोई अबहाम (अस्पष्टता) ना रह जाए। अहले मक्का में से उन अवाम के लिये भी हक़ को पहचानने में कोई शक व शुबह बाक़ी ना रहे जिन्हें अब तक सरदारों ने गुमराह कर रखा था। अगर अब भी किसी की आँखें नहीं खुलतीं और वह हलाकत के रास्ते पर ही गामज़न रहने को तरजीह देता है तो यह उसकी मरज़ी, मगर हम चाहते हैं कि अगर ऐसे लोगों को हलाक ही होना है तो उनमें से हर फ़र्द हक़ के पूरी तरह वाज़ेह होने के बाद हलाक हो।

وَّيَحْيٰى مَنْ حَيَّ عَنْۢ بَيِّنَةٍ ۭ وَاِنَّ اللّٰهَ لَسَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝۴۲

"और जिसे ज़िन्दा रहना हो वह ज़िन्दा रहे वाज़ेह दलील की बिना पर। यक़ीनन अल्लाह सब कुछ सुनने वाला और जानने वाला है।"

जो सीधे रास्ते पर आना चहाता है वह भी इस बय्यिना की बिना पर सीधे रास्ते पर आ जाए और हयाते मअनवी हासिल कर ले।

आयत 43

اِذْ يُرِيْكَهُمُ اللّٰهُ فِيْ مَنَامِكَ قَلِيْلًا ۭ

"जब अल्लाह आपको दिखा रहा था (ऐ नबी ﷺ) उन्हें आपकी नींद में कम तादाद में"

रसूल अल्लाह ﷺ ने ख़्वाब में देखा कि क़ुरैश के लश्कर की तादाद बहुत ज़्यादा नहीं है, बस थोड़े से लोग हैं जो बदर की तरफ़ जंग के लिये आ रहे हैं, हालाँकि वह एक हज़ार अफ़राद पर मुश्तमिल बहुत बड़ा लश्कर था।

وَلَوْ اَرٰىكَهُمْ كَثِيْرًا

"और अगर आप ﷺ को दिखाता कि वह कसीर तादाद में हैं"

और आप ﷺ ने अपने साथियों को वह खबर ज्यों की त्यों बताई होती:

لَّفَشِلْتُمْ وَلَتَنَازَعْتُمْ فِي الْاَمْرِ

"(तो ऐ मुसलमानों!) तुम ज़रूर कमज़ोरी दिखाते और मामले में इख्तलाफ़ करते"

दुश्मन की असल तादाद और ताक़त के बारे में जान कर आप लोग पस्त हिम्मत हो जाते और इख्तलाफ़ में पड़ जाते कि हमें बदर में जाकर इस लश्कर का मुक़ाबला करना भी चाहिये या नहीं। इस तरह आराअ (राय) में इख्तलाफ़ की बिना पर भी तुम्हारी जमीअत में कमज़ोरी आ जाती।

وَلٰكِنَّ اللّٰهَ سَلَّمَ ۭ اِنَّهٗ عَلِيْمٌۢ بِذَاتِ الصُّدُوْرِ ۝۴۳

"लेकिन अल्लाह ने सलामती पैदा फ़रमा दी। यक़ीनन वह वाक़िफ़ है उससे जो कुछ सीनों के अन्दर है।"

रसूल अल्लाह ﷺ ने जो ख़्वाब देखा वह तो ग़लत नहीं हो सकता था, क्योंकि अंबिया अलै. के तमाम ख़्वाब सच्चे होते हैं। इसलिये मुफ़स्सरीन ने इस नुक्ते की तौजीह (explanation) इस तरह की है कि आप ﷺ को लश्करे कुफ्फ़ार की मअनवी हक़ीक़त दिखाई गई थी। यानि किसी चीज़ की एक कमियत (quantitative value) होती है और एक उसकी कैफ़ियत और उसकी असल हक़ीक़त होती है। कमियत के पहलु से देखा जाए तो लश्करे कुफ्फ़ार की तादाद एक हज़ार थी और वह मुसलमानों से तीन गुना थे, मगर इस लश्कर की अंदरूनी कैफ़ियत यकसर मुख्तलिफ़ थी। दर हक़ीक़त मक्के के अवामुन्नास की अक्सरियत हुज़ूर ﷺ को अपने मआशरे का बेहतरीन इंसान समझती थी। उनकी सोच के मुताबिक़ आप ﷺ के तमाम साथी भी मक्के के बेहतरीन लोग थे। मक्के का आम आदमी दिल से इस हक़ीक़त को तस्लीम करता था कि मोहम्मद ﷺ और आपके साथियों

ने कोई जुर्म नहीं किया है, बल्कि यह लोग एक ख़ुदा को मानने वाले, नेकियों का हुक्म देने वाले और शरीफ़ लोग हैं। चुनाँचे मक्के की ख़ामोश अक्सरियत की हमदर्दियां मुसलमानों के साथ थीं। ऐसे तमाम लोग अपने सरदारों और लीडरों के हुक्म की तामील में लश्कर में शामिल तो हो गए थे, मगर उनके दिल अपने लीडरों के साथ नहीं थे। जंग में दरअसल जान की बाज़ी लगाने का जज़्बा ही इन्सान को बहादुर और ताक़तवर बनाता है और यह जज़्बा नज़रिये की सच्चाई और नज़रियाती पुख्तगी से पैदा होता है। क़ुरैश के इस लश्कर में किसी ऐसे हक़ीक़ी जज़्बे का सिरे से फ़क़दान (अभाव) था। लिहाज़ा तादाद में अगरचे वह लोग ज़्यादा थे मगर मअनवी तौर पर उनकी जो कैफ़ियत और असल हक़ीक़त थी इस लिहाज़ से वह बहुत कम थे और हुज़ूर ﷺ को ख़्वाब में अल्लाह तआला ने उनकी असल हक़ीक़त दिखाई थी।

आयत 44

وَاِذْ يُرِيْكُمُوْهُمْ اِذِ الْتَقَيْتُمْ فِيْٓ اَعْيُنِكُمْ قَلِيْلًا وَّيُقَلِّلُكُمْ فِيْٓ اَعْيُنِهِمْ

"और जब तुम आमने-सामने हुए तो तुम्हारी नज़रों में उन्हें (कुफ़्फ़ार को) थोड़ा करके दिखाता था और उनकी नज़रों में तुम्हें थोड़ा करके दिखाता था"

जब दोनों लश्कर मुक़ाबले के लिये आमने-सामने हुए तो अल्लाह तआला ने ऐसी कैफ़ियत पैदा कर दी कि मुसलमानों को भी देखने में कुफ़्फ़ार थोड़े लग रहे थे और कुफ़्फ़ार को भी मुसलमान थोड़े नज़र आ रहे थे। ऐसी सूरते हाल अल्लाह तआला ने इसलिये पैदा फ़रमा दी ताकि यह जंग डट कर हो। इसलिये कि वह इस दिन को "यौमुल फ़ुरक़ान" बनाना चाहता था और नहीं चाहता था कि कोई फ़रीक़ भी मैदान से कन्नी कतराए।

لِيَقْضِيَ اللّٰهُ اَمْرًا كَانَ مَفْعُوْلًا ۭ وَاِلَى اللّٰهِ تُرْجَعُ الْاُمُوْرُ ۝

"ताकि अल्लाह पूरा कर दे उस मामले को जो होने वाला ही था। और तमाम मामलात (बिल आख़िर तो) अल्लाह ही की तरफ़ लौटा दिए जायेंगे।"

आयात 45 से 48 तक

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا لَقِيْتُمْ فِئَةً فَاثْبُتُوْا وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيْرًا لَّعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝ وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ وَلَا تَنَازَعُوْا فَتَفْشَلُوْا وَتَذْهَبَ رِيْحُكُمْ وَاصْبِرُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ ۝ وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ خَرَجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ بَطَرًا وَّرِئَاۗءَ النَّاسِ وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ۭ وَاللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطٌ ۝ وَاِذْ زَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطٰنُ اَعْمَالَهُمْ وَقَالَ لَا غَالِبَ لَكُمُ الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ وَاِنِّىْ جَارٌ لَّكُمْ ۚ فَلَمَّا تَرَاۗءَتِ الْفِئَتٰنِ نَكَصَ عَلٰي عَقِبَيْهِ وَقَالَ اِنِّىْ بَرِيْۗءٌ مِّنْكُمْ اِنِّىْٓ اَرٰي مَا لَا تَرَوْنَ اِنِّىْٓ اَخَافُ اللّٰهَ ۭ وَاللّٰهُ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

आयत 45

يٰٓاَيُّهَا الَّذِيْنَ اٰمَنُوْٓا اِذَا لَقِيْتُمْ فِئَةً فَاثْبُتُوْا

"ऐ अहले ईमान! जब भी तुम्हारा मुक़ाबला हो किसी गिरोह से तो साबित क़दम रहो"

यह वह दौर था जब हक़ और बातिल में मुसल्लाह तसादुम शुरू हो चुका था और दीन के गलबे की जद्दो-जहद आखरी मरहले में दाख़िल हो चुकी थी। गज़वा-ए-बदर इस सिलसिले की पहली जंग थी और अभी बहुत सी मज़ीद जंगे लड़ी जानी थीं। इस पसमंज़र में मुसलमानों को मैदाने जंग

और जंगी हिकमते अमली के बारे में ज़रूरी हिदायात दी जा रही हैं कि जब भी किसी फौज़ से मैदाने जंग में तुम्हारा मुक़ाबला हो तो तुम साबित क़दम रहो, और कभी भी, किसी भी हालत में दुश्मन को पीठ ना दिखाओ।

وَاذْكُرُوا اللّٰهَ كَثِيْرًا لَّعَلَّكُمْ تُفْلِحُوْنَ ۝

"और अल्लाह का ज़िक्र करते रहो कसरत के साथ ताकि तुम फ़लाह पाओ।"

हालते जंग में भी अल्लाह को कसरत से याद करते रहो, क्योंकि तुम्हारी असल ताक़त का इन्हसार अल्लाह की मदद पर है। लिहाज़ा तुम अल्लाह पर भरोसा रखो: {وَاصْبِرْ وَمَا صَبْرُكَ اِلَّا بِاللّٰهِ} (नहल 127), क्योंकि एक बंदा-ए-मोमिन का सब्र अल्लाह के भरोसे पर ही होता है। अगर तुम्हारे दिल अल्लाह की याद से मुन्नवर होंगे, उसके साथ क़ल्बी और रूहानी ताल्लुक़ असत्वार (मज़बूत) होगा, तो तुम्हें साबित क़दम रहने के लिये सहारा मिलेगा, और अगर अल्लाह के साथ तुम्हारा यह ताल्लुक़ कमज़ोर पड़ गया तो फिर तुम्हारी हिम्मत भी जवाब दे देगी।

आयत 46

وَاَطِيْعُوا اللّٰهَ وَرَسُوْلَهٗ

"और हुक्म मानो अल्लाह का और उसके रसूल (ﷺ) का"

यह तीसरा हुक्म डिसिप्लीन के बारे में है कि जो हुक्म तुम्हें रसूल ﷺ की तरफ़ से मिले उसकी दिलो जान से पाबंदी करो। अगरचे यहाँ अल्लाह और उसके रसूल ﷺ की इताअत की बात हुई है लेकिन हक़ीक़त में देखा जाये तो अमली तौर पर यह इताअत रसूल अल्लाह ﷺ ही की थी, क्योंकि जो हुक्म भी आता था वह आप ﷺ ही की तरफ़ से आता था। क़ुरान भी हुज़ूर ﷺ की ज़बाने मुबारक से अदा होता था और अगर आप ﷺ अपनी किसी तदबीर से इज्तेहाद के तहत कोई फ़ैसला फ़रमाते या कोई राय ज़ाहिर फ़रमाते तो वह भी आप ﷺ ही की ज़बाने मुबारक से अदा होता था। लिहाज़ा अमलन अल्लाह की इताअत आप ﷺ ही की इताअत में मुज़मर है। इक़बाल ने इस नुक्ते को बहुत खूबसूरती से इस एक मिसरे में समो दिया है: *"ब-मुस्तफ़ा ब-रसाँ ख्वेश रा कि दें हमा ऊस्त!"*

وَلَا تَنَازَعُوْا فَتَفْشَلُوْا وَتَذْهَبَ رِيْحُكُمْ وَاصْبِرُوْا ۭ اِنَّ اللّٰهَ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ ۝

"और आपस में झगड़ा ना करो वरना तुम ढीले पड़ जाओगे और तुम्हारी हवा उखड़ जायेगी, और साबित क़दम रहो। यक़ीनन अल्लाह साबित क़दम रहने वालों के साथ है।"

यह वही अल्फ़ाज़ हैं जो हम सूरह आले इमरान की आयत 152 में पढ़ चुके हैं। वहाँ गज़वा-ए-ओहद के वाक़िये पर तबसिरा करते हुए अल्लाह तआला ने फ़रमाया:

وَلَقَدْ صَدَقَكُمُ اللّٰهُ وَعْدَهٗٓ اِذْ تَحُسُّوْنَهُمْ بِاِذْنِهٖ ۚ ۝ اِذَا فَشِلْتُمْ وَ تَنَازَعْتُمْ فِي الْاَمْرِ وَعَصَيْتُمْ مِّنْۢ بَعْدِ مَآ اَرٰىكُمْ مَّا تُحِبُّوْنَ ۭ

अल्लाह तआला को तो इल्म था कि एक साल बाद (ग़ज़वा-ए-ओहद में) क्या सूरते हाल पेश आने वाली है। चुनाँचे एक साल पहले ही मुसलमानों को जंगी हिकमते अमली के बारे में बहुत वाज़ेह हिदायात दी जा रही हैं, कि डिसिप्लिन की पाबंदी करो और इताअते रसूल ﷺ पर कारबंद रहो।

आयत 47

وَلَا تَكُوْنُوْا كَالَّذِيْنَ خَرَجُوْا مِنْ دِيَارِهِمْ بَطَرًا وَّرِئَاۗءَ النَّاسِ

"और उन लोगों की मानिन्द ना हो जाना जो निकले थे अपने घरों से इतराते हुए, लोगों को दिखाने के लिये"

यह क़ुरैश के लश्कर की तरफ़ इशारा है। जब यह लश्कर मक्का से रवाना हुआ तो उसकी शानो शौक़त वाक़ई मरऊब कुन थी। उसके साथ ऐश व तरब का सामान भी था। यही वजह थी कि अबु जहल और दीगर सरदाराने

क़ुरैश अपने गुरूर और तकब्बुर बाइस इस ज़अम (गुमान) में थे कि मुट्ठी भर मुसलमान हमारे इस ताक़तवर लश्कर के सामने खस व खाशाक़ साबित होंगे और हम उन्हें कुचल कर रख देंगे।

وَيَصُدُّوْنَ عَنْ سَبِيْلِ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا يَعْمَلُوْنَ مُحِيْطٌ ۝۴۷

"और वह अल्लाह के रास्ते से रोक रहे थे। और जो कुछ वह लोग कर रहे थे अल्लाह उसका इहाता किये हुए था।"

वह अपनी सारी कोशिशें और तवानाइयाँ मख्लूक़े खुदा को अल्लाह के रास्ते से रोकने के लिये सर्फ़ कर रहे थे, मगर उनकी कोई तदबीर अल्लाह के क़ाबू से बाहर जाने वाली तो नहीं थी।

आयत 48

وَاِذْ زَيَّنَ لَهُمُ الشَّيْطٰنُ اَعْمَالَهُمْ وَقَالَ لَا غَالِبَ لَكُمُ الْيَوْمَ مِنَ النَّاسِ

"और जब शैतान ने उनके लिये उनके आमाल को मुज़य्यन कर दिया था और उसने (उनसे) कहा था कि आज तुम पर इन्सानों में से कोई ग़ालिब नही आ सकता"

यानि उनके दिलों में शैतान ने मुतकब्बिराना ख़यालात पैदा कर दिए थे और उन्हें खुशफ़हमी में मुबतला कर दिया था कि तुम्हारा यह साज़ो सामान, यह अस्लाह, यह इतना बड़ा लश्कर, यह सब ग़ैर मामूली और अनहोनी सूरतेहाल है। अरब की तारीख़ में इस तरह के मौक़े बहुत कम मिलते हैं। किस में हिम्मत है कि आज इस लश्कर के सामने ठहर सके और किसके पास इतनी ताक़त है कि आज तुम्हारे ऊपर ग़लबा पा सके?

وَاِنِّيْ جَارٌ لَّكُمْ ۚ

"और मैं भी तुम्हारे साथ ही हूँ।"

فَلَمَّا تَرَآءَتِ الْفِئَتٰنِ نَكَصَ عَلٰى عَقِبَيْهِ

"फिर जब दोनों लश्कर आमने-सामने हुए तो वह अपने एड़ियों के बल पीछे फिर गया"

وَقَالَ اِنِّيْ بَرِيْٓءٌ مِّنْكُمْ اِنِّيْٓ اَرٰى مَا لَا تَرَوْنَ

"और कहने लगा कि मैं तुमसे ला-ताल्लुक़ हूँ, मैं वह कुछ देख रहा हूँ जो तुम नहीं देख रहे हो"

चूँकि इब्लीस (अज़ाज़ील) की तख्लीक़ आग़ से हुई है, लिहाज़ा नारी मख्लूक़ होने की वजह से उसने फ़रिश्तों को नाज़िल होते देख लिया और यह कहते हुए उलटे पाँव भाग खड़ा हुआ कि मैं तो यहाँ वह कुछ देख रहा हूँ जो तुम लोगों को नज़र नहीं आ रहा है।

اِنِّيْٓ اَخَافُ اللّٰهَ ؕ وَاللّٰهُ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝۴۸

"मुझे अल्लाह का खौफ़ है। और अल्लाह सज़ा देने में बहुत सख्त है।"

.

आयात 49 से 58 तक

اِذْ يَقُوْلُ الْمُنٰفِقُوْنَ وَالَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ غَرَّ هٰٓؤُلَآءِ دِيْنُهُمْ ؕ وَمَنْ يَّتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝۴۹ وَلَوْ تَرٰٓى اِذْ يَتَوَفَّى الَّذِيْنَ كَفَرُوا ۙ الْمَلٰٓئِكَةُ يَضْرِبُوْنَ وُجُوْهَهُمْ وَاَدْبَارَهُمْ ۚ وَذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ ۝۵۰ ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ ۝۵۱ كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ؕ كَفَرُوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ بِذُنُوْبِهِمْ ؕ اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝۵۲ ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ لَمْ يَكُ مُغَيِّرًا نِّعْمَةً اَنْعَمَهَا عَلٰى قَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوْا مَا بِاَنْفُسِهِمْ ۙ وَاَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝۵۳ كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ؕ كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِ

رَبِّهِمْ فَاَهْلَكْنٰهُمْ بِذُنُوْبِهِمْ وَاَغْرَقْنَاۤ اٰلَ فِرْعَوْنَ ۚ وَكُلٌّ كَانُوْا ظٰلِمِيْنَ ﴿٥٤﴾ اِنَّ شَرَّ
الدَّوَآبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ﴿٥٥﴾ الَّذِيْنَ عٰهَدْتَّ مِنْهُمْ ثُمَّ
يَنْقُضُوْنَ عَهْدَهُمْ فِيْ كُلِّ مَرَّةٍ وَّهُمْ لَا يَتَّقُوْنَ ﴿٥٦﴾ فَاِمَّا تَثْقَفَنَّهُمْ فِي الْحَرْبِ
فَشَرِّدْ بِهِمْ مَّنْ خَلْفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُوْنَ ﴿٥٧﴾ وَاِمَّا تَخَافَنَّ مِنْ قَوْمٍ خِيَانَةً
فَانْۢبِذْ اِلَيْهِمْ عَلٰى سَوَآءٍ ۭ اِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْخَاۗىِٕنِيْنَ ﴿٥٨﴾

आयत 49

اِذْ يَقُوْلُ الْمُنٰفِقُوْنَ وَالَّذِيْنَ فِيْ قُلُوْبِهِمْ مَّرَضٌ

"जब कह रहे थे मुनाफ़िक़ीन और वह लोग जिनके दिलों में रोग था"

अभी तक एक तरफ़ के हालात का नक़्शा पेश किया जा रहा था। यानि लश्करे क़ुरैश की मक्के से रवानगी, उस लश्कर की कैफ़ियत, उनके सरदारों के मुतकब्बिराना ख्यालात, शैतान का उनकी पीठ ठोकना और फिर ऐन वक़्त पर भाग खड़े होना। अब इस अयात में मदीने के हालात का तबसिरा है कि जब रसूल अल्लाह ﷺ मदीने से लश्कर लेकर निकले तो पीछे रह जाने वाले मुनाफ़िक़ीन क्या-क्या बातें बना रहे थे। वह कह रहे थे:

غَرَّ هٰٓؤُلَاۗءِ دِيْنُهُمْ ۭ

"इन (मुसलमानों) को तो इनके दीन ने बिल्कुल धोखे में दाल दिया है"

यानि इन लोगों का दिमाग़ ख़राब हो गया है जो क़ुरैश के इतने बड़े लश्कर से मुक़ाबला करने चल पड़े हैं। हम तो पहले ही इनको सुफ़हाअ (अहमक़) समझते थे, मगर अब तो महसूस होता है कि यह लोग अपने दीन के पीछे बिल्कुल ही पागल हो गए हैं।

وَمَنْ يَّتَوَكَّلْ عَلَي اللّٰهِ فَاِنَّ اللّٰهَ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ﴿٤٩﴾

"और (इन्हें क्या पता कि) जो कोई तवक्कुल करता है अल्लाह पर तो अल्लाह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।"

आयत 50

وَلَوْ تَرٰٓى اِذْ يَتَوَفَّى الَّذِيْنَ كَفَرُوا ۙ الْمَلٰۗىِٕكَةُ

"और काश तुम देख सकते जब क़ब्ज़ करते हैं फ़रिश्ते इन काफ़िरों की जानों को"

يَضْرِبُوْنَ وُجُوْهَهُمْ وَاَدْبَارَهُمْ ۚ وَذُوْقُوْا عَذَابَ الْحَرِيْقِ ﴿٥٠﴾

"ज़रबें लगाते हुए उनके चेहरों और उनकी पीठों पर, और (कहते हैं कि अब) चखो जलने का अज़ाब।"

आयत 51

ذٰلِكَ بِمَا قَدَّمَتْ اَيْدِيْكُمْ وَاَنَّ اللّٰهَ لَيْسَ بِظَلَّامٍ لِّلْعَبِيْدِ ﴿٥١﴾ۙ

"यह वह कुछ है जो तुम्हारे अपने हाथों ने आगे भेजा है और अल्लाह तो हरगिज़ अपने बन्दों के हक़ में ज़ालिम नहीं है।"

आयत 52

كَدَأْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ؕ

"(इनके साथ वही मामला हुआ) जैसे कि मामला हुआ आले फ़िरऔन का और उन लोगों का जो उनसे पहले थे।"

आले फ़िरऔन के पहले क़ौमे शोएब (अलै.) थी, क़ौमे शोएब से पहले क़ौमे लूत (अलै.), उनसे पहले क़ौमे समूद, उनसे पहले क़ौमे आद और उनसे पहले क़ौमे नूह। इन सारी क़ौमों के अंजाम के बारे में हम सूरतुल आराफ़ में पढ़ चुके हैं।

كَفَرُوْا بِاٰيٰتِ اللّٰهِ فَاَخَذَهُمُ اللّٰهُ بِذُنُوْبِهِمْ ؕ

"उन्होंने अल्लाह की आयात का कुफ़्र किया, तो अल्लाह ने उन्हें पकड़ लिया उनके गुनाहों की पादाश में।"

اِنَّ اللّٰهَ قَوِيٌّ شَدِيْدُ الْعِقَابِ ۝

"यक़ीनन अल्लाह क़वी है और सज़ा देने में सख्त है।"

आयत 53

ذٰلِكَ بِاَنَّ اللّٰهَ لَمْ يَكُ مُغَيِّرًا نِّعْمَةً اَنْعَمَهَا عَلٰى قَوْمٍ حَتّٰى يُغَيِّرُوْا مَا بِاَنْفُسِهِمْ ۙ

"यह इसलिये कि अल्लाह का यह तरीक़ा नहीं कि कोई नेअमत जो उसने किसी क़ौम को दी हो उसमें तगय्युर करे जब तक कि वह क़ौम अपनी अंदरूनी कैफ़ियत को मुतगय्युर ना कर दे"

अल्लाह तआला ने हर क़ौम की तरफ़ अपना पैग़म्बर मबऊस किया, जिसने अल्लाह की तौहीद और उसके अहकाम के मुताबिक़ उस क़ौम को दावत दी। पैग़म्बर की दावत पर लब्बैक कहने वालों को अल्लाह तआला ने अपनी नेअमतों से नवाज़ा, उन पर अपने ईनामात और अहसानात की बारिशें कीं। फिर अपने पैग़म्बर के बाद उन लोगों ने आहिस्ता-आहिस्ता कुफ़्र व ज़लालत की रविश इख्तियार की और तौहीद के शहराह को छोड़ कर शिर्क की पगडंडियाँ इख्तियार कर लीं तो अल्लाह तआला की नेअमतों ने भी उनसे मुहँ मोड़ लिया, ईनामात की जगह अल्लाह के अज़ाब ने ले ली और यूँ वह क़ौम तबाह व बरबाद कर दी गई।

हज़रत नूह अलै. की कश्ती पर सवार होने वाले मोमिनीन की नस्ल से एक क़ौम वुजूद में आई। जब वह क़ौम गुमराह हुई तो हज़रत हूद अलै. को उनकी तरफ़ भेजा गया। फ़िर हज़रत हूद अलै. पर ईमान लाने वालों की नस्ल से एक क़ौम ने जन्म लिया और फिर वह लोग गुमराह हुए तो उनकी तरफ़ हज़रत सालेह अलै. मबऊस हुए। गोया हर क़ौम इसी तरह वुजूद में आई, मगर अल्लाह तआला ने किसी क़ौम से अपनी नेअमत उस वक़्त तक सल्ब नही की जब तक कि ख़ुद उन्होंने हिदायत की राह को छोड़ कर गुमराही इख्तियार नहीं की। यह मज़मून बाद में सूरतुल रआद (आयत 11) में भी आयेगा। मौलाना ज़फर अली खान ने इस मज़मून को एक ख़ूबसूरत शेर में इस तरह ढाला है:

ख़ुदा ने आज तक उस क़ौम की हालत नही बदली
ना हो जिसको ख्याल आप अपनी हालत के बदलने का!

इस फ़लसफ़े के मुताबिक़ जब कोई क़ौम मेहनत को अपना शआर (नारा) बना लेती है तो उसके ज़ाहिरी हालात में मुसबत तब्दीली आती है और यूँ उसकी तक़दीर बदलती है। सिर्फ़ ख़ुश फ़हमियों (wishful thinkings) और दुआओं से क़ौमों की तक़दीरें नहीं बदला करतीं, और क़ौम चूँकि अफ़राद का मजमुआ होती है, इसलिये तब्दीली का आग़ाज़ अफ़राद से होता है। पहले चंद अफ़राद की क़ल्बे माहियत होती है और उनकी सोच, उनके नज़रियात, उनके ख्यालात, उनके मक़ासिद, उनकी दिलचस्पियाँ और उनकी उमंगें तब्दील होती हैं। जब ऐसे पाक बातिन लोगों की तादाद रफ़्ता-रफ़्ता बढती है और वह लोग एक ताक़त और क़ुव्वत के तौर पर ख़ुद को मुनज़्ज़म करके बातिल की राह में सीसा पिलाई हुई दीवार बन कर खड़े हो जाते हैं तो तागूती तूफ़ान अपना रुख बदलने

पर मजबूर हो जाते हैं। यूँ अहले हक़ की क़ुर्बानियों से निज़ाम बदलता है, मआशरा फिर से राहे हक़ पर गामज़न होता है और इन्क़लाब की सहरे पुर नूर तुलूअ होती है। लेकिन याद रखें इस इन्क़लाब के लिये फ़िक्री व अमली बुनियाद और इस कठिन सफ़र में ज़ादेराह की फ़राहमी सिर्फ़ और सिर्फ़ क़ुरानी तालीमात से मुमकिन है। इसी से इन्सान के अंदर की दुनिया में इन्क़लाब आता है। इसी अक्सीर से उसकी क़ल्बे माहियत होती है और फिर मिट्टी का यह अंबार यकायक शमशीर बेज़नहार का रूप धार लेता है। अल्लामा इक़बाल ने इस लतीफ़ नुक्ते की वज़ाहत इस तरह की है:

चूं बहा दर रफ़त जां दीगर शूद
जां चूं दीगर शद जहां दीगर शूद

यानि जब यह क़ुरान किसी इन्सान के दिल के अंदर उतर जाता है तो उसके दिल और उसकी रूह को बदल कर रख देता है। और एक बन्दा-ए-मोमिन के अंदर का यही इन्क़लाब बिलआखिर आलमी इन्क़लाब की सूरत इख्तियार कर सकता है।

وَاَنَّ اللّٰهَ سَمِيْعٌ عَلِيْمٌ ۝٥٣

"और यह कि अल्लाह सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है।"

आयत 54

كَدَاْبِ اٰلِ فِرْعَوْنَ ۙ وَالَّذِيْنَ مِنْ قَبْلِهِمْ ۭ

"जैसा कि मामला हुआ आले फ़िरऔन का और जो उनसे पहले थे।"

كَذَّبُوْا بِاٰيٰتِ رَبِّهِمْ فَاَهْلَكْنٰهُمْ بِذُنُوْبِهِمْ

"उन्होंने अपने रब की आयात तो झुठलाया तो हमने उनको हलाक कर डाला उनके गुनाहों की पादाश में"

وَاَغْرَقْنَآ اٰلَ فِرْعَوْنَ ۚ وَكُلٌّ كَانُوْا ظٰلِمِيْنَ ۝٥٤

"और आले फ़िरऔन को हमने गर्क़ कर दिया, और यह सब के सब ज़ालिम थे।"

आयत 55

اِنَّ شَرَّ الدَّوَاۗبِّ عِنْدَ اللّٰهِ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا فَهُمْ لَا يُؤْمِنُوْنَ ۝٥٥

"यक़ीनन बदतरीन चौपाये अल्लाह के नज़दीक यही लोग हैं जो कुफ़्र करते हैं और ईमान नहीं लाते।"

यही बात इससे पहले हम सूरतुल आराफ़ की आयत नम्बर 179 में भी पढ़ चुके हैं कि यह लोग इन्सान नज़र आते हैं, हक़ीक़त में इन्सान नहीं हैं: {لَهُمْ قُلُوْبٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ بِهَا ۡ وَلَهُمْ اَعْيُنٌ لَّا يُبْصِرُوْنَ بِهَا ۡ وَلَهُمْ اٰذَانٌ لَّا يَسْمَعُوْنَ بِهَا ۭ اُولٰۗىِٕكَ كَالْاَنْعَامِ بَلْ هُمْ اَضَلُّ} यानि हक़ीक़त में वह लोग चौपायों के मानिंद हैं बल्कि उनसे भी गये गुज़रे हैं। उन्हीं लोगों को यहाँ "شَرَّ الدَّوَاۗبِّ" कहा गया है, कि यही वह हैवान नुमा इन्सान हैं जो तमाम जानवरों से बुरे हैं। जो अक़ल, शऊर और ईमान की नेअमतों के मुक़ाबले में कुफ़्र की रविश इख्तियार करके दुनिया की लज़्ज़तों पर रीझ गए हैं।

आयत 56

اَلَّذِيْنَ عٰهَدْتَّ مِنْهُمْ ثُمَّ يَنْقُضُوْنَ عَهْدَهُمْ فِيْ كُلِّ مَرَّةٍ وَّهُمْ لَا يَتَّقُوْنَ ۝٥٦

"वह लोग जिनसे (ऐ नबी ﷺ) आपने मुआहिदा किया था, फिर वह हर मरतबा अपना अहद तोड़ देते हैं और वह (इस बारे में) डरते नहीं हैं।"

यह इशारा यहूदे मदीना की तरफ़ है। रसूल अल्लाह ﷺ जब मदीना मुनव्वरा तशरीफ़ लाये तो आप ﷺ ने आते ही यहूदियों से मुज़ाकरात

शुरू किये नतीजतन मदीने के तीनों यहूदी क़बाइल से शहर के मुश्तरका के दिफ़ा का मुआहिदा कर लिया। प्रोफ़ेसर मन्टगुमरी वाट (1909 से 2006 ई.) ने इस मुआहिदे को आप ﷺ का एक बहुत बड़ा मुदब्बिराना कारनामा क़रार दिया है। उसने इस सिलसिले में आप ﷺ की मामला फ़हमी और सियासी बसीरत को शानदार अल्फ़ाज़ में खिराजे तहसीन पेश किया है। ज़ाहिरी तौर पर अगरचे यहूदी इस मुआहिदे के पाबन्द थे मगर ख़ुफ़िया तौर पर मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िशों से भी बाज़ नहीं आते थे। उन्होंने हर मुश्किल मरहले पर इस मुआहिदे का पास ना करते हुए आप ﷺ के दुश्मनों के साथ साज़-बाज़ की, हत्ता कि गज़वा-ए-अहज़ाब के इन्तहाई नाज़ुक मौक़े पर क़ुरैश को ख़ुफ़िया तौर पर पैगामात भिजवाए कि आप लोग बाहर से शहर पर हमला कर दें, हम अंदर से तुम्हारी मदद करेंगे।

आयत 57

فَإِمَّا تَثْقَفَنَّهُمْ فِي الْحَرْبِ فَشَرِّدْ بِهِم مَّنْ خَلْفَهُمْ لَعَلَّهُمْ يَذَّكَّرُونَ ﴿٥٧﴾

“तो अगर आप इन्हें जंग में पा जाएँ तो इनको ऐसी सज़ा दें कि जो इनके पीछे हैं उनको भी खौफ़ज़दा कर दें, ताकि वह इबरत हासिल करें।”

यह यहूदी आप लोगों के ख़िलाफ़ कुफ्फ़ारे मक्का के साथ मिल कर ख़ुफ़िया तौर पर साज़िशें तो हर वक़्त करते ही रहते हैं, लेकिन अगर इनमें से कुछ लोग मैदाने जंग में भी पकड़े जाएँ कि वह क़ुरैश की तरफ़ से जंग में शरीक हुए हों तो ऐसी सूरत में इनको ऐसी इबरतनाक सज़ा दो कि क़ुरैशे मक्का जो पीछे बैठ कर इनकी ड़ोरें हिला रहे हैं और इन साज़िशों की मंसूबा बंदियाँ कर रहे हैं उनके होश भी ठिकाने आ जाएँ।

आयत 58

وَإِمَّا تَخَافَنَّ مِن قَوْمٍ خِيَانَةً فَانبِذْ إِلَيْهِمْ عَلَىٰ سَوَاءٍ

“और अगर आपको अंदेशा हो जाए किसी क़ौम की तरफ़ से बदअहदी का तो फेंक दीजिये (उनका मुआहिदा) उनकी तरफ़ खुल्लम-खुल्ला।”

पिछली आयत में इन्फ़रादी फ़अल के तौर पर मुआहिदे की ख़िलाफ़वरज़ी का ज़िक्र था। मसलन किसी क़बीले का कोई फ़र्द इस तरह की किसी साज़िश में मुलव्विस पाया जाए तो मुमकिन है ऐसी सूरत में उसके क़बीले के लोग या सरदार उससे बरीउज़्ज़िम्मा हो जाएँ कि यह उस शख्स का ज़ाती और इन्फ़रादी फ़अल है और इज्तमाई तौर पर हमारा क़बीला बदस्तूर मुआहिदे का पाबन्द है। लेकिन इस आयत में क़ौमी सतह पर इस मसले का हल बताया गया है कि ऐ नबी ﷺ! अगर आपको किसी क़ौम या क़बीले की तरफ़ से मुआहिदे की ख़िलाफ़वरज़ी का अंदेशा हो तो ऐसी सूरत में आप उनके मुआहिदे को अलल ऐलान मंसूख (abrogate) कर दें। क्योंकी अल्लाह तआला अहले ईमान को अख्लाक़ के जिस मैयार पर देखना चाहता है उसमें यह मुमकिन नहीं कि बज़ाहिर मुआहिदा भी क़ायम रहे और अन्दरूनी तौर पर उनके ख़िलाफ़ इक़दाम की मंसूबाबंदी भी होती रहे, बल्कि ऐसी सूरत में आप ﷺ खुल्लम-खुल्ला यह ऐलान कर दें कि आज से मेरे और तुम्हारे दरमियान कोई मुआहिदा नहीं।

मौलाना मौदूदी रहि. ने 1948 में जिहादे कश्मीर के बारे में अपनी राय का इज़हार इसी क़ुरानी हुक्म की रोशनी में किया था, कि हिन्दुस्तान के साथ हमारे सिफ़ारती ताल्लुक़ात के होते हुए यह इक़दाम क़ुरान और शरीअत की रू से ग़लत है और इस्लाम के नाम पर बनने वाली ममलकत की हुकूमत को ऐसी पालिसी ज़ेब नहीं देती। पाकिस्तान को अल्लाह पर भरोसा करते हुए अपनी पालिसी का खुल्लम-खुल्ला ऐलान करना चाहिये। मेज़ के ऊपर बाहमी तआवुन के मुआहिदे करना, दोस्ती के हाथ बढाना और मेज़ के नीचे से एक दूसरे की टांगे खींचना दुनियादारों का वतीरा तो हो सकता है अहले ईमान का तरीक़ा नहीं। मौलाना मौदूदी रहि. की यह

राय अगरचे इस आयत के ऐन मुताबिक़ थी मगर उस वक़्त उनकी इस राय के ख़िलाफ़ अवाम में ख़ासा इश्तआल पैदा हो गया था।

إِنَّ اللّٰهَ لَا يُحِبُّ الْخَآئِنِيْنَ ۝٥٨

"यक़ीनन अल्लाह ख्यानत करने वालों को पसंद नहीं करता।"

आयात 59 से 66 तक

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَبَقُوْا ؕ اِنَّهُمْ لَا يُعْجِزُوْنَ ۝٥٩ وَاَعِدُّوْا لَهُمْ مَّا اسْتَطَعْتُمْ مِّنْ قُوَّةٍ وَّمِنْ رِّبَاطِ الْخَيْلِ تُرْهِبُوْنَ بِهٖ عَدُوَّ اللّٰهِ وَعَدُوَّكُمْ وَاٰخَرِيْنَ مِنْ دُوْنِهِمْ ۚ لَا تَعْلَمُوْنَهُمْ ۚ اَللّٰهُ يَعْلَمُهُمْ ؕ وَمَا تُنْفِقُوْا مِنْ شَيْءٍ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ يُوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُوْنَ ۝٦٠ وَاِنْ جَنَحُوْا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ؕ اِنَّهٗ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝٦١ وَاِنْ يُّرِيْدُوْٓا اَنْ يَّخْدَعُوْكَ فَاِنَّ حَسْبَكَ اللّٰهُ ؕ هُوَ الَّذِيْٓ اَيَّدَكَ بِنَصْرِهٖ وَبِالْمُؤْمِنِيْنَ ۝٦٢ وَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ ؕ لَوْ اَنْفَقْتَ مَا فِي الْاَرْضِ جَمِيْعًا مَّآ اَلَّفْتَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ وَلٰكِنَّ اللّٰهَ اَلَّفَ بَيْنَهُمْ ؕ اِنَّهٗ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝٦٣ يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ حَسْبُكَ اللّٰهُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝٦٤ يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ حَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلَى الْقِتَالِ ؕ اِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ عِشْرُوْنَ صٰبِرُوْنَ يَغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ ۚ وَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ يَّغْلِبُوْٓا اَلْفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ ۝٦٥ اَلْـٰٔنَ خَفَّفَ اللّٰهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ اَنَّ فِيْكُمْ ضَعْفًا ؕ فَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ صَابِرَةٌ يَّغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ ۚ وَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ اَلْفٌ يَّغْلِبُوْٓا اَلْفَيْنِ بِاِذْنِ اللّٰهِ ؕ وَاللّٰهُ مَعَ الصّٰبِرِيْنَ ۝٦٦

आयत 59

وَلَا يَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا سَبَقُوْا ؕ

"और ना समझें वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया है कि वह बच निकले हैं।"

गज़वा-ए-बदर में कुफ्फ़ार के एक हज़ार अफ़राद में से बहुत से लोग सही सलामत बच भी निकले थे। यह उनके बारे में फ़रमाया जा रहा है कि वह ग़लत फ़हमी में ना रहें कि वो बाज़ी ले गए हैं।

اِنَّهُمْ لَا يُعْجِزُوْنَ ۝٥٩

"वह (अल्लाह को) आजिज़ नहीं कर सकेंगे।"

वह हमारे क़ाबू से बाहर नहीं जा सकेंगे।

आयत 60

وَاَعِدُّوْا لَهُمْ مَّا اسْتَطَعْتُمْ مِّنْ قُوَّةٍ وَّمِنْ رِّبَاطِ الْخَيْلِ

"और तैयार रखो उनके (मुक़ाबले के) लिये अपनी इस्तताअत की हद तक ताक़त और बंधे हुए घोड़े"

यहाँ मुसलमानों को वाज़ेह तौर पर हुक्म दिया जा रहा है कि अब जबकि तुम्हारी तहरीक तसादुम के मरहले में दाख़िल हो चुकी है तो तुम लोग अपने वसाइल के मुताबिक़, मक़दूर भर फ़न हर्ब (जंग) की सलाहियत व आहलियत, अस्लाह और घोड़े वगैरह जिहाद के लिये तैयार रखो। अगरचे एक मोमिन को अल्लाह की नुसरत पर तवक्कुल करना चाहिये, मगर तवक्कुल का यह मतलब हरगिज़ नहीं कि वह हाथ पर हाथ धरे बैठा रहे और उम्मीद रखे कि सब कुछ अल्लाह की मदद से ही हो जायेगा। बल्कि तवक्कुल यह है कि अपनी इस्तताअत के मुताबिक़ अपने तमाम मुम्किना माद्दी और तकनीकी वसाइल मुहैय्या रखे जाएँ और फिर अल्लाह की नुसरत पर तवक्कुल किया जाए।

यहाँ मुसलमानों को अपने दुश्मनों के ख़िलाफ़ भरपूर दिफ़ाई सलाहियत हासिल करने की हत्तल वसीअ कोशिश करने का हुक्म दिया गया है। तैयारी का यह हुक्म हर दौर के लिये है। आज अगर अल्लाह तआला ने पाकिस्तान को एटमी सलाहियत से नवाज़ा है तो यह सलाहियत मुल्क व क़ौम की क़ुव्वत व ताक़त की अलामत भी है और तमाम आलमे इस्लाम की तरफ़ से पाकिस्तान के पास एक अमानत भी। अगर इस सिलसिले में किसी दबाव के तहत, किसी भी क़िस्म का कोई समझौता (compromise) किया गया तो यह अल्लाह, उसके दीन और तमाम आलमे इस्लाम से एक तरह की ख्यानत होगी। लिहाज़ा आज वक़्त की यह अहम ज़रूरत है कि पाकिस्तानी क़ौम अपने दुश्मनों से होशियार रहते हुए इस सिलसिले में जुर्रातमन्दाना पालिसी अपनाये, ताकि इसके दुश्मनों के लिये एटमी हथियारों की सूरत में क़ुव्वते मज़ाहमत का तवाज़ुन (deterrence) क़ायम रहे।

تُرْهِبُوْنَ بِهٖ عَدُوَّ اللّٰهِ وَعَدُوَّكُمْ

"(ताकि) तुम इससे अल्लाह के दुश्मनों और अपने दुश्मनों को डरा सको"

وَاٰخَرِيْنَ مِنْ دُوْنِهِمْ ۚ لَا تَعْلَمُوْنَهُمْ ۚ اَللّٰهُ يَعْلَمُهُمْ ۭ

"और कुछ दूसरों को (भी) जो इनके अलावा हैं, तुम उन्हें नहीं जानते, अल्लाह उन्हें जानता है।"

यानि तुम्हारी आस्तीनों के साँप मुनाफ़िक़ीन जो दर परदा तुम्हारी तबाही और बरबादी के दर पे रहते हैं। तुम्हारी नज़रों से तो वह छुपे हुए हैं मगर अल्लाह तआला उनको ख़ूब जानता है।

وَمَا تُنْفِقُوْا مِنْ شَيْءٍ فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ يُوَفَّ اِلَيْكُمْ وَاَنْتُمْ لَا تُظْلَمُوْنَ ۝۶۰

"और जो कुछ भी तुम अल्लाह की राह में खर्च करोगे इसका सवाब पूरा-पूरा तुम्हें दिया जायेगा और तुम पर कोई ज़्यादती नहीं होगी।"

यानि अगर अस्लाह खरीदना है, साज़ो-सामान फ़राहम करना है, घोड़े तैयार करने हैं तो इस सब कुछ के लिये अखराजात तो होंगे। लिहाज़ा जंगी तैयारी के साथ ही इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह का हुक्म भी आ गया, इस ज़मानत के साथ कि जो कोई जितना भी इस सिलसिले में अल्लाह के रास्ते में खर्च करेगा उसको वादे के मुताबिक़ पूरा-पूरा अजर दिया जायेगा और किसी की ज़र्रा बराबर भी हक़ तल्फ़ी नहीं होगी। यहाँ इन्फ़ाक़ फ़ी सबीलिल्लाह के बारे में सूरतुल बक़रह के रुकूअ 36 और 37 में दिये गए अहकाम को ज़हन में दोबारा ताज़ा करने की ज़रूरत है। मतलब यह है कि ऐ मुसलमानों! अब तुम्हारी तहरीक का वह मरहला शुरू हो चुका है जहाँ तुम्हारा जंग के लिये मुमकिन हद तक तैयारी करना और कील-कांटे से लैस होना नागुज़ीर हो गया है। लिहाज़ा अब आगे बढ़ो और इस अज़ीम मक़सद के लिये दिल खोल कर खर्च करो। अल्लाह तुम्हें एक के बदले सात सौ तक देने का वादा कर चुका है, बल्कि यह भी आखरी हद नहीं है। जज़्बा-ए-ईसार व ख़ुलूस जिस क़दर ज़्यादा होगा यह अजर व सवाब इसी क़दर बढ़ता चला जायेगा। लिहाज़ा अपना माल सेंत-सेंत कर रखने के बजाय अल्लाह की राह में खर्च कर डालो, ताकि दुनिया में अल्लाह के दिन के गलबे के लिये काम में आ जाए और आखिरत में तुम्हारी फ़लाह का ज़ामिन बन जाये।

आयत 61

وَاِنْ جَنَحُوْا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا

"और (ऐ नबी ﷺ!) अगर वह अपने बाज़ू झुका दें अमन के लिये तो आप भी झुक जाएँ इसके लिये"

अगर मुख़ालिफ़ फ़रीक़ सुलह पर आमादा नज़र आए तो आप ﷺ भी अमन की ख़ातिर मुनासिब शराइत पर उनसे सुलह कर लें।

وَتَوَكَّلْ عَلَى اللّٰهِ ؕ اِنَّهٗ هُوَ السَّمِيْعُ الْعَلِيْمُ ۝

"और अल्लाह पर तवक्कुल कीजिए, यक़ीनन वह सब कुछ सुनने वाला, जानने वाला है।"

यानि आप ﷺ उनकी मख़्फ़ी चालों से फ़िकरमंद ना हों, अल्लाह पर तवक्कुल रखें और सुलह का जवाब सुलह से ही दें।

आयत 62

وَاِنْ يُّرِيْدُوْٓا اَنْ يَّخْدَعُوْكَ فَاِنَّ حَسْبَكَ اللّٰهُ ؕ

"और अगर वह इरादा रखते हों आप ﷺ को धोखा देने का, तब भी (आप ﷺ घबराइये नहीं) आप ﷺ के लिये अल्लाह काफ़ी है।"

गोया उनकी साज़िशों और रेशादवानियों के ख़िलाफ़ अल्लाह तआला की तरफ़ से ज़मानत दी जा रही है।

هُوَ الَّذِيْٓ اَيَّدَكَ بِنَصْرِهٖ وَبِالْمُؤْمِنِيْنَ ۝

"और वही तो है (अल्लाह) जिसने आपकी मदद की है अपनी नुसरत से और अहले ईमान के ज़रिये से।"

यह नुक्ता क़ाबिले गौर है कि अल्लाह तआला ने रसूल अल्लाह ﷺ की मदद अहले ईमान के ज़रिये से की। यानि अल्लाह तआला ने अपने ख़ास फ़ज़ल व करम से आपको ऐसे मुख्लिस और जाँनिसार सहाबा रज़ि. अता किये कि जहाँ आप ﷺ का पसीना गिरा वहाँ उन्होंने अपने खून की नदियाँ बहा दीं। अल्लाह तआला की इस ख़ुसूसी इमदाद की शान उस वक़्त ख़ूब निखर कर सामने आती है जब हम मोहम्मद रसूल अल्लाह ﷺ के सहाबा रज़ि. के मुक़ाबले में हज़रत मूसा अलै. के साथियों का तरज़े अमल देखते हैं। जब हज़रत मूसा अलै. ने अपनी क़ौम के लोगों से फ़रमाया कि तुम अल्लाह की राह में जंग के लिये निकलो, तो उन्होंने (सूरतुल मायदा 24) साफ़ कह दिया था: {فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ} "तो जाइये आप और आपका रब दोनों जाकर लड़ें, हम तो यहाँ बैठे हैं।" जिस पर हज़रत मूसा अलै. ने बेज़ारी से यहाँ तक कह दिया था: {رَبِّ اِنِّىْ لَآ اَمْلِكُ اِلَّا نَفْسِىْ وَاَخِىْ فَافْرُقْ بَيْنَنَا وَبَيْنَ الْقَوْمِ الْفٰسِقِيْنَ} (सूरतुल मायदा 25) "ऐ मेरे रब! मैं तो अपनी जान और अपने भाई के अलावा किसी पर कोई इख्तियार नहीं रखता, लिहाज़ा आप हमारे और इस फ़ासिक़ क़ौम के दरमियान अलैहदगी कर दें।"

एक तरफ़ यह तर्ज़े अमल है जबकि दूसरी तरफ़ नबी अकरम ﷺ के सहाबा रज़ि. का अंदाज़े इख्लास और जज़्बा-ए-जाँनिसारी है। गज़वा-ए-बदर से पहले जब हुज़ूर ﷺ ने मक़ामे सफराअ पर सहाबा रज़ि. से मशावरत की (और यह बड़ी कांटेदार मशावरत थी) तो कुछ लोग मुसलसल ज़ोर दे रहे थे कि हमे क़ाफ़िले की तरफ़ चलना चाहिये और वह अपने इस मौक़फ़ के हक़ में बड़ी ज़ोरदार दलीलें दे रहे थे, मगर हुज़ूर ﷺ हर बार फ़रमा देते कि कुछ और लोग भी मशवरा दें! इस पर मुहाजरीन में से हज़रत मिक़दाद रज़ि. ने खड़े होकर यही बात की थी कि ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ! जिधर आपका रब आपको हुक्म दे रहा है उसी तरफ़ चलिये, आप हमें हज़रत मूसा अलै. के साथियों की तरह ना समझें, जिन्होंने (सूरतुल मायदा 24) कह दिया था: {فَاذْهَبْ اَنْتَ وَرَبُّكَ فَقَاتِلَآ اِنَّا هٰهُنَا قٰعِدُوْنَ}। हम आप ﷺ के साथी हैं, आप ﷺ जो हुक्म दें हम हाज़िर हैं। इस मौक़े पर हज़रत अबु बकर सिद्दीक़ और हज़रत उमर रज़ि. ने भी इज़हारे ख्याल फ़रमाया, लेकिन हुज़ूर ﷺ अंसार की राय मालूम करना चाहते थे। इसलिये कि बैत उक़बा-ए-सानिया के मौक़े पर अंसार ने यह वादा किया था कि मदीने पर हमला हुआ तो हम आप ﷺ की हिफ़ाज़त करेंगे, लेकिन यहाँ मामला मदीने से बाहर निकल कर जंग करने का था, लिहाज़ा जंग का फ़ैसला अंसार की राय मालूम किये बगैर नहीं किया जा सकता था। हज़रत सआद बिन मआज़ रज़ि. ने आप ﷺ की मंशा को भाँप लिया, लिहाज़ा वह खड़े हुए और अर्ज़ किया: ऐ अल्लाह के रसूल ﷺ शायद

आप ﷺ का रुए सुखन हमारी (अन्सार की) तरफ़ है। आप ﷺ ने फ़रमाया: हाँ! इस पर उन्होंने कहा: لَقَدْ اٰمَنَّا بِکَ وَ صَدَّقْنَاکَ..... हम आप ﷺ पर ईमान ला चुके हैं, हम आप ﷺ की तसदीक़ कर चुके हैं, हम आप ﷺ को अल्लाह का रसूल मान चुके हैं और आप ﷺ से समअ-व-इतआत का पुख्ता अहद बाँध चुके हैं, अब हमारे पास आप ﷺ के हुक्म की तामील के अलावा कोई रास्ता (option) नहीं है। क़सम है उस ज़ात की जिसने आपको हक़ के साथ भेजा है, अगर आप अपनी सवारी इस समंदर में डाल देंगे तो हम भी आपके पीछे अपनी सवारियाँ समंदर में दाल देंगे। और खुदा की क़सम, अगर आप ﷺ हमें कहेंगे तो हम बरकुल ग्माद (यमन का शहर) तक जा पहुँचेंगे, चाहे इसमें हमारी ऊँटनियाँ लागर हो जाएँ। हमको यह हरगिज़ नागवार नही है कि आप ﷺ कल हमें लेकर दुश्मन से जा टकराएँ। हम जंग में साबित क़दम रहेंगे, मुक़ाबले में सच्ची जाँनिसारी दिखायेंगे, और बईद नहीं कि अल्लाह आप ﷺ को हमसे वह कुछ दिखवा दे जिसे देख कर आप ﷺ की आँखे ठंडी हो जाएँ। पस अल्लाह की बरकत के भरोसे पर आप ﷺ हमें ले चालें! हज़रत सआद रज़ि. की इस तक़रीर के बाद हुज़ूर ﷺ का चेहरा खुशी से चमक उठा और आप ﷺ ने बदर की तरफ़ कूच करने का हुक्म दिया। यह एक झलक है उस मदद की जो अल्लाह की तरफ़ से आप ﷺ के इन्तहाई सच्चे और मुख्लिस सहाबा रज़ि. की सूरत में हुज़ूर ﷺ के शामिले हाल थी।

आयत 63

وَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ ؕ لَوْ اَنْفَقْتَ مَا فِى الْاَرْضِ جَمِيْعًا مَّاۤ اَلَّفْتَ بَيْنَ قُلُوْبِهِمْ

"और इन (अहले ईमान) के दिलों में उसने उलफ़त पैदा कर दी। अगर आप ज़मीन की सारी दौलत भी ख़र्च कर देते तो इनके दिलों में यह उलफ़त पैदा नहीं कर सकते थे"

وَلٰكِنَّ اللّٰهَ اَلَّفَ بَيْنَهُمْ ؕ

"लेकिन यह तो अल्लाह ने उनके माबैन (ऐसी) उलफ़त पैदा कर दी।"

सूरह आले इमरान की आयत 103 में अल्लाह तआला ने अपने इस फ़ज़ले ख़ास का ज़िक्र इन अल्फ़ाज़ में किया है:

وَاذْكُرُوْا نِعْمَتَ اللّٰهِ عَلَيْكُمْ اِذْ كُنْتُمْ اَعْدَآءً فَاَلَّفَ بَيْنَ قُلُوْبِكُمْ فَاَصْبَحْتُمْ بِنِعْمَتِهٖۤ اِخْوَانًا ۚ وَكُنْتُمْ عَلٰى شَفَا حُفْرَةٍ مِّنَ النَّارِ فَاَنْقَذَكُمْ مِّنْهَا ؕ

"और अपने उपर अल्लाह की उस नेअमत को याद करो कि तुम लोग एक दूसरे के दुश्मन थे, फ़िर अल्लाह ने तुम्हारे दिलों में बाहम उलफ़त पैदा कर दी तो उसकी नेअमत से तुम भाई-भाई बन गए, और तुम लोग तो आग के गड्ढे के किनारे तक पहुँच चुके थे जहाँ से अल्लाह ने तुम्हें बचाया है।"

اِنَّهٗ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝۶۳

"यक़ीनन वह ज़बरदस्त है, हिकमत वाला है।"

आयत 64

يٰۤاَيُّهَا النَّبِىُّ حَسْبُكَ اللّٰهُ وَمَنِ اتَّبَعَكَ مِنَ الْمُؤْمِنِيْنَ ۝۶۴

"ऐ नबी (ﷺ) आपके लिये काफ़ी है अल्लाह और वह जो पैरवी कर रहे हैं आपकी अहले ईमान में से।"

अगर इस आयत को पिछली आयत के साथ तसल्सुल से पढ़ा जाए तो इसका तर्जुमा यही होगा जो उपर किया गया है, लेकिन इसका दूसरा तर्जुमा यूँ होगा: "ऐ नबी (ﷺ) अल्लाह काफ़ी है आपके लिये भी और जो आपकी पैरवी करने वाले मुसलमान हैं उनके लिये भी।" इबारत का अंदाज़ ऐसा है कि इसमें यह दोनों मफ़ाहीम आ गए हैं।

आयत 65

يٰٓاَيُّهَا النَّبِيُّ حَرِّضِ الْمُؤْمِنِيْنَ عَلَى الْقِتَالِ ؕ

"ऐ नबी (ﷺ) तरगीब दिलाइये अहले ईमान को क़िताल की।"

हिजरत के बाद 9 साल तक क़िताल के लिये तरगीब, तशवीक़ और तहरीस के ज़रिये ही ज़ोर दिया गया। यह तहरीस गाढ़ी होकर "तहरीज़" बन गयी। उस दौर में मुजाहिदीन की फ़ज़ीलत बयान की गई, उनसे बुलंद दरजात का वादा किया गया (निसा:95) मगर क़िताल को हर एक के लिये फ़र्ज़े ऐन क़रार नहीं दिया गया। लेकिन 9 हिजरी में गज़वा-ए-तबूक़ के मौक़े पर जिहाद के लिये निकलना तमाम अहले ईमान पर फ़र्ज़ कर दिया गया। उस वक़्त तमाम अहले ईमान के लिये नफ़ीरे आम थी और किसी को बिला उज़र पीछे रहने की इजाज़त नहीं थी।

اِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ عِشْرُوْنَ صٰبِرُوْنَ يَغْلِبُوْا مِائَتَيْنِ ۚ

"अगर तुम में से बीस अफ़राद होंगे सबर करने वाले (साबित क़दम) तो वह दो सौ अफ़राद पर ग़ालिब आ जायेंगे"

وَاِنْ يَّكُنْ مِّنْكُمْ مِّائَةٌ يَّغْلِبُوْٓا اَلْفًا مِّنَ الَّذِيْنَ كَفَرُوْا

"और अगर होंगे तुम में से सौ अफ़राद तो वह ग़ालिब आ जायेंगे कुफ्फ़ार के एक हज़ार अफ़राद पर"

بِاَنَّهُمْ قَوْمٌ لَّا يَفْقَهُوْنَ ۝۶۵

"यह इसलिये कि वह ऐसे लोग हैं जो समझ नहीं रखते।"

यहाँ समझ ना रखने से मुराद यह है कि उन्हें अपने मौक़फ़ की सच्चाई का यक़ीन नहीं है। एक तरफ़ वह शख्स है जिसे अपने नज़रिये और मौक़फ़ की हक्क़ानियत पर पुख्ता यक़ीन है, उसका ईमान है कि वह हक़ पर है और हक़ के लिये लड़ रहा है। दूसरी तरफ़ उसके मुक़ाबले में वह शख्स है जो नज़रियाती तौर पर डांवाडोल है, किसी का तनख्वाह याफ़ता है या किसी के हुक्म पर मजबूर होकर लड़ रहा है। अब इन दोनो अश्खास की कारकर्दगी में ज़मीन व आसमान का फ़र्क़ होगा। चुनाँचे कुफ्फ़ार को जंग में साबित क़दमी और इसतक़लाल की वह कैफ़ियत हासिल हो ही नहीं सकती जो नज़रिये की सच्चाई पर जान क़ुरबान करने के जज़्बे से पैदा होती है। दोनों अतराफ़ के अफ़राद की नज़रियाती कैफ़ियत के इसी फ़र्क़ की बुनियाद पर कुफ्फ़ार के एक सौ अफ़राद पर दस मुसलमानों को कामयाबी की नवीद सुनाई गई है। इसके बाद वाली आयत अगरचे ज़मानी लिहाज़ से कुछ अरसा बाद नाज़िल हुई मगर मज़मून के तसल्सुल के बाइस यहाँ शामिल कर दी गई है।

आयत 66

اَلْـٰٔنَ خَفَّفَ اللّٰهُ عَنْكُمْ وَعَلِمَ اَنَّ فِيْكُمْ ضَعْفًا ؕ

"अब अल्लाह ने तुम पर से तख़्फ़ीफ़ कर दी है और अल्लाह के इल्म में है कि तुम्हारे अंदर कुछ कमज़ोरी आ गई है।"

यह किस कमज़ोरी का ज़िक्र है और यह कमज़ोरी कैसे आई? इस नुक्ते को अच्छी तरह समझ लें। जहाँ तक मुहाजरीन और अंसार में से उन सहाबा किराम रज़ि. का ताल्लुक़ है जो साबिक़ूनल अव्वलून में से थे तो उनके अंदर (मआज़ अल्लाह) किसी क़िस्म की भी कोई कमज़ोरी नहीं थी, लेकिन जो लोग नये मुसलमान हो रहे थे उनकी तरबियत अभी उस अंदाज़ में नहीं हो पाई थी जैसे पुराने लोगों की हुई थी। उनके दिलों में अभी ईमान पूरी तरह रासिख नहीं हुआ था और मुसलमानों की मज्मुई तादाद में ऐसे नये लोगों का तनासुब रोज़-ब-रोज़ बढ़ रहा था। मसलन अगर पहले हज़ार लोगों में पचास या सौ नए लोग हों तो औसत कुछ और था, लेकिन अब उनकी तादाद खासी ज़्यादा होती जा रही थी तो अब औसत कुछ और होगा। लिहाज़ा औसत के ऐतबार से मुसलमानों की सफ़ों में पहले की निसबत अब कमज़ोरी आ गई थी।

مَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنۡ يَّكُوۡنَ لَهٗۤ اَسۡرٰى حَتّٰى يُثۡخِنَ فِى الۡاَرۡضِ‌ؕ

"किसी नबी के लिये यह ज़ेबा नहीं कि उसके क़ब्ज़े में क़ैदी हों जब तक कि वह (काफ़िरों को क़त्ल करके) ज़मीन में ख़ूब ख़ूँरेज़ी ना कर दे।"

यह आयत गज़वा-ए-बदर में पकड़े जाने वाले क़ैदियों के बारे में नाज़िल हुई। गज़वा-ए-बदर में क़ुरैश के सत्तर लोग क़ैदी बने। उनके बारे में रसूल अल्लाह ﺺ ने सहाबा रज़ि. से मशावरत की। हज़रत अबु बकर रज़ि. की राय थी कि इन लोगों के साथ नरमी की जाए और फ़िदया वगैरह लेकर इन्हें छोड़ दिया जाए। खुद हुज़ूर ﺺ चूँकि रऊफ़ व रहीम और रफ़ीक़ुल क़ल्ब थे इसलिये आप ﺺ की भी यही राय थी। मगर हज़रत उमर रज़ि. इस ऐतबार से बहुत सख्तगीर थे (اَشَدُّ هُمۡ فِى اَمۡرِ اللهِ عُمَرِ)। आपकी राय यह थी कि यह लोग आज़ाद होकर फ़िर कुफ़्र के लिये तक़वियत का बाइस बनेंगे, इसलिये जब तक कुफ़्र की कमर पूरी तरह टूट नहीं जाती इनके साथ नरमी ना की जाए। आपका इसरार था कि तमाम क़ैदियों को क़त्ल कर दिया जाए, बल्कि मुहाजरीन अपने क़रीब-तरीन अज़ीज़ों को ख़ुद अपने हाथों से क़त्ल करें। बाद में इन क़ैदियों को फ़िदया लेकर छोड़ने का फ़ैसला हुआ और इस पर अमल दरामद भी हो गया। इस फ़ैसले पर इस आयत के ज़रिये गिरफ़्त हुई कि जब तक बातिल की कमर पूरी तरह से तोड़ ना दी जाए उस वक़्त तक हमलावर कुफ्फ़ार को जंगी क़ैदी बनाना दुरुस्त नहीं। इन्हें क़ैदी बनाने का मतलब यह है कि वह ज़िन्दा रहेंगे, और आज नहीं तो कल इन्हें छोड़ना ही पड़ेगा। लिहाज़ा वह फिर से बातिल की ताक़त का सबब बनेंगे और फिर से तुम्हारे ख़िलाफ़ लड़ेंगे।

تُرِيۡدُوۡنَ عَرَضَ الدُّنۡيَا ۖ

"तुम दुनिया का साज़ो सामान चाहते हो"

यह फ़िदये की तरफ़ इशारा है। अब ना तो रसूल अल्लाह ﺺ की यह नीयत हो सकती थी (मआज़ अल्लाह) और ना ही हज़रत अबु बकर रज़ि.

فَاِنۡ يَّكُنۡ مِّنۡكُمۡ مِّائَةٌ صَابِرَةٌ يَّغۡلِبُوۡا مِائَتَيۡنِ ۚ

"पस अगर तुम में एक सौ साबित क़दम रहने वाले होंगे तो वह दो सौ पर ग़ालिब आ जाएँगे"

وَاِنۡ يَّكُنۡ مِّنۡكُمۡ اَلۡفٌ يَّغۡلِبُوۡۤا اَلۡفَيۡنِ بِاِذۡنِ اللهِ‌ؕ

"और अगर तुम में एक हज़ार होंगे तो वह दो हज़ार पर ग़ालिब आ जाएँगे अल्लाह के हुक्म से।"

وَاللهُ مَعَ الصّٰبِرِيۡنَ ۝٦٦

"और यक़ीनन अल्लाह सबर करने वालों (साबित क़दम रहने वालों) के साथ है।"

आयात 67 से 71 तक

مَا كَانَ لِنَبِيٍّ اَنۡ يَّكُوۡنَ لَهٗۤ اَسۡرٰى حَتّٰى يُثۡخِنَ فِى الۡاَرۡضِ‌ؕ تُرِيۡدُوۡنَ عَرَضَ الدُّنۡيَا ۖ وَاللهُ يُرِيۡدُ الۡاٰخِرَةَ‌ؕ وَاللهُ عَزِيۡزٌ حَكِيۡمٌ ۝٦٧ لَوۡلَا كِتٰبٌ مِّنَ اللهِ سَبَقَ لَمَسَّكُمۡ فِيۡمَاۤ اَخَذۡتُمۡ عَذَابٌ عَظِيۡمٌ ۝٦٨ فَكُلُوۡا مِمَّا غَنِمۡتُمۡ حَلٰلًا طَيِّبًا ۖ وَّاتَّقُوا اللهَ‌ؕ اِنَّ اللهَ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝٦٩ يٰۤاَيُّهَا النَّبِىُّ قُلۡ لِّمَنۡ فِىۡۤ اَيۡدِيۡكُمۡ مِّنَ الۡاَسۡرٰۤى ۙ اِنۡ يَّعۡلَمِ اللهُ فِىۡ قُلُوۡبِكُمۡ خَيۡرًا يُّؤۡتِكُمۡ خَيۡرًا مِّمَّاۤ اُخِذَ مِنۡكُمۡ وَيَغۡفِرۡ لَكُمۡ‌ؕ وَاللهُ غَفُوۡرٌ رَّحِيۡمٌ ۝٧٠ وَاِنۡ يُّرِيۡدُوۡا خِيَانَتَكَ فَقَدۡ خَانُوا اللهَ مِنۡ قَبۡلُ فَاَمۡكَنَ مِنۡهُمۡ‌ؕ وَاللهُ عَلِيۡمٌ حَكِيۡمٌ ۝٧١

आयत 67

की, लेकिन अल्लाह तआला का मामला ऐसा है कि उसके यहाँ जब अपने मुक़र्रिब बन्दों की गिरफ़्त होती है तो अल्फ़ाज़ बज़ाहिर बहुत सख्त इस्तेमाल किया जाते हैं। चुनाँचे इन अल्फ़ाज़ में भी एक तरह की सख्ती मौजूद है, लेकिन ज़ाहिर है कि यह बात ना हुज़ूर ﷺ के लिये है और ना हज़रत अबु बकर रज़ि. के लिये।

وَاللّٰهُ يُرِيْدُ الْاٰخِرَةَ ۭ وَاللّٰهُ عَزِيْزٌ حَكِيْمٌ ۝۶۷

"और अल्लाह के पेशे नज़र आख़िरत है। और अल्लाह ज़बरदस्त, हिकमत वाला है।"

आयत 68

لَوْلَا كِتٰبٌ مِّنَ اللّٰهِ سَبَقَ لَمَسَّكُمْ فِيْمَآ اَخَذْتُمْ عَذَابٌ عَظِيْمٌ ۝۶۸

"अगर अल्लाह की तरफ़ से बात पहले से तय ना हो चुकी होती तो जो कुछ (फ़िदया वगैरह) तुमने लिया है इसके बाइस तुम पर बड़ा सख्त अज़ाब आता।"

इससे मुराद सूरह मुहम्मद का वह हुक्म है (आयत 4) जो बहुत पहले नाज़िल हो चुका था। इसकी तफ़सील हम इंशा अल्लाह सूरह मुहम्मद के मुताअले के दौरान पढेंगे कि रसूल अल्लाह ﷺ ने इस हुक्म की ताबीर (interpretation) में किस तरह फ़िदया लेने की गुन्जाईश निकाली थी। यह दरअसल क़ानून की तशरीह व ताबीर का मामला है। जैसा कि सूरतुल ज़ुमर की आयत 18 में इरशाद है: {اَلَّذِيْنَ يَسْتَمِعُوْنَ الْقَوْلَ فَيَتَّبِعُوْنَ اَحْسَنَهٗ } यानि वह लोग जो किसी बात को सुन कर पैरवी करते हैं उसमें से बेहतरीन की और इसके आला तरीन दर्जे तक पहुँचने की कोशिश करते हैं। चुनाँचे इस क़ानून की ताबीर में भी ऐसे ही हुआ। चूँकि मज़कूरा हुक्म के अंदर यह गुन्जाईश या रिआयत मौजूद थी इसलिये हुज़ूर ﷺ ने अपनी तबियत की नरमी के सबब इसको इख्तियार फ़रमा लिया। आयत ज़ेरे नज़र के अंदर से भी यही इशारा मिलता है कि सूरह मुहम्मद में नाज़िल शुदा हुक्म में रिआयत की गुन्जाईश मौजूद थी, इसलिये तो इस हुक्म का हवाला देकर फ़रमाया गया कि अगर वह हुक्म पहले नाज़िल ना हो चुका होता तो जो भी तुमने फ़िदया वगैरह लिया है इसके बाइस तुम पर बड़ा अज़ाब आता। रिवायात में आता है कि हुज़ूर ﷺ और हज़रत अबु बकर रज़ि. इस आयत के नुज़ूल के बाद रोते रहे हैं। बरहाल इस फ़ैसले में किसी सरीह हुक्म की ख़िलाफ़ वरज़ी नहीं थी और जो भी राय इख्तियार की गयी थी वह इज्तहादी थी और आप ﷺ ने इज्तहाद के ज़रिये इस हुक्म में से नरमी और रिआयत का एक पहलू इख्तियार कर लिया था।

आयत 69

فَكُلُوْا مِمَّا غَنِمْتُمْ حَلٰلًا طَيِّبًا ۠

"तो अब खाओ जो कुछ तुम्हें मिला है ग़नीमत में से (कि वह तुम्हारे लिये) हलाल और तैय्यब (है)"

एक माले ग़नीमत तो वह था जो मुसलामानों को ऐन हालते जंग में मिला था, और दूसरे इस माल को भी ग़नीमत क़रार देकर बिला कराहत हलाल और जायज़ क़रार दे दिया गया जो क़ैदियों से बतौर फ़िदया हासिल किया गया था।

وَّاتَّقُوا اللّٰهَ ۭ اِنَّ اللّٰهَ غَفُوْرٌ رَّحِيْمٌ ۝۶۹

"और अल्लाह का तक़वा इख्तियार करो, यक़ीनन अल्लाह बख्शने वाला, रहम फ़रमाने वाला है।"

आयत 70

يَٰٓأَيُّهَا ٱلنَّبِيُّ قُل لِّمَن فِيٓ أَيۡدِيكُم مِّنَ ٱلۡأَسۡرَىٰٓ

"ऐ नबी (ﷺ) कह दीजिये उन लोगों से जो आपके क़ब्ज़े में क़ैदी हैं"

इस आयत का मफ़हूम समझने के लिये पसमंज़र के तौर पर गज़वा-ए-बदर के क़ैदियों के बारे में दो बातें ज़हन में रखिये। एक तो इन क़ैदियों में बहुत से वह लोग भी शामिल थे जो अपनी मरज़ी से जंग लड़ने नहीं आए थे। वह अपने सरदारों के दबाव या बाज़ दूसरी मस्लहतों के तहत बा दिले नाख्वास्ता जंग में शरीक हुए थे। दूसरी अहम बात उनके बारे में यह थी कि इनमें से बहुत से लोग बाज़ मुसलामानों के बहुत क़रीबी रिश्तेदार थे। ख़ुद नबी अकरम ﷺ के हक़ीक़ी चचा हज़रत अब्बास रज़ि. बिन अब्दुल मुत्तलिब भी इन क़ैदियों में शामिल थे। इनके बारे में गुमाने ग़ालिब यही है कि वह ईमान तो ला चुके थे मगर इस वक़्त तक इन्होंने अपने ईमान का ऐलान नहीं किया था। रिवायात में है कि हज़रत अब्बास रज़ि. जिन रस्सियों में बंधे हुए थे उनके बंद बहुत सख्त थे। वह तकलीफ़ के बाइस बार-बार कराहते तो हुज़ूर ﷺ उनकी आवाज़ सुन कर बेचैन हो जाते थे, मगर क़ानून तो क़ानून है, लिहाज़ा आप ﷺ ने उनके लिये किसी रिआयत की ख्वाहिश का इज़हार नहीं फ़रमाया। मगर जब उनकी तकलीफ़ तबियत पर ज़्यादा गिराँ गुज़री तो आप ﷺ ने हुक्म दिया कि तमाम क़ैदियों के बंद ढीले कर दिये जाएँ। इसी तरह आप ﷺ के दामाद अबुल आस भी क़ैद होकर आए थे और जब आप ﷺ की बड़ी सहाबज़ादी हज़रत ज़ैनब रज़ि. ने अपने शौहर को छुड़ाने के लिये अपना हार फ़िदये के तौर पर भेजा, जो उनको हज़रत ख़दीजा रज़ि. ने उनकी शादी के मौक़े पर दिया था तो हुज़ूर ﷺ के लिये बड़ी रिक्क़त आमेज़ सूरते हाल पैदा हो गयी। आप ﷺ ने जब वह हार देखा तो आप ﷺ की आँखों में आँसू आ गए। हज़रत ख़दीजा रज़ि. के साथ गुज़ारी हुई सारी ज़िन्दगी, आपकी खिदमत गुज़ारी और वफ़ा शआरी की याद मुजस्सम होकर निगाहों के सामने आ गयी। आप ﷺ ने फ़रमाया कि आप लोग अगर इजाज़त दें तो यह हार वापस कर दिया जाए ताकि माँ की निशानी बेटी के पास ही रहे। चुनाँचे सबकी इजाज़त से वह हार वापस भिजवा दिया गया। यूँ क़ैदियों के साथ अक्सर मुहाजरीन के ख़ूनी रिश्ते थे, इसलिए कि यह सब लोग एक ही ख़ानदान और एक ही क़बीले से ताल्लुक़ रखते थे। यहाँ नबी अकरम ﷺ से खिताब करके कहा जा रहा है कि आपके क़ब्ज़े में जो क़ैदी हैं आप उनसे कह दीजिए:

إِن يَعۡلَمِ ٱللَّهُ فِي قُلُوبِكُمۡ خَيۡرٗا يُؤۡتِكُمۡ خَيۡرٗا مِّمَّآ أُخِذَ مِنكُمۡ

"अगर अल्लाह तुम्हारे दिलों में कोई भलाई पायेगा तो जो कुछ तुमसे ले लिया गया है वह उससे बेहतर तुम्हें दे देगा"

यानि तुम्हारी नीयतों का मामला तुम्हारे और अल्लाह के माबैन है, जबकि बरताव तुम्हारे साथ खालीसतन क़ानून के मुताबिक़ होगा। तुम सब लोग जंग में कुफ़्फ़ार का साथ देने के लिये आये थे और अब क़ानूनन जंगी क़ैदी हो। जंग में कोई अपनी खुशी से आया था या मजबूरन, कोई दिल में ईमान लेकर आया था या कुफ़्र की हालत में आया था, इन सब बातों की हक़ीक़त को अल्लाह ख़ूब जानता है और वह दिलों की नीयतों के मुताबिक़ ही तुम सबके साथ मामला करेगा और जिसके दिल में ख़ैर और भलाई पायेगा उसको कहीं बेहतर अंदाज़ में वह उस भलाई का सिला देगा।

وَيَغۡفِرۡ لَكُمۡۚ وَٱللَّهُ غَفُورٞ رَّحِيمٞ ٧٠

"और तुम्हें बख्श देगा, और अल्लाह बख्शने वाला, बहुत रहम करने वाला है।"

आयत 71

وَإِن يُرِيدُواْ خِيَانَتَكَ فَقَدۡ خَانُواْ ٱللَّهَ مِن قَبۡلُ

"और अगर यह लोग आप (ﷺ) से ख्यानत करना चाहें तो इससे पहले यह अल्लाह से भी ख्यानत करते रहे हैं"

فَاَمۡكَنَ مِنۡهُمۡ ؕ وَاللّٰهُ عَلِيۡمٌ حَكِيۡمٌ ۝۱۱

"तो अल्लाह ने उनको पकडवा दिया। और अल्लाह जानने वाला, हिकमत वाला है।"

यानि इन क़ैदियों में ऐसे भी होंगे जो आप ﷺ से झूठ बोलेंगे, झूठे बहाने बनायेंगे, बेजा मअज़रतें पेश करेंगे। तो इस नौइयत की ख्यानतें यह अल्लाह से भी करते रहे हैं और इनके ऐसे ही करतूतों की पादाश में इनको यह सज़ा दी गयी है कि अब यह लोग आप ﷺ के क़ाबू में हैं।

अब अगली आयात गोया इस सूरह-ए-मुबारका का "हासिल कलाम" यानि concluding आयात हैं।

आयात 72 से 75 तक

اِنَّ الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَهَاجَرُوۡا وَجٰهَدُوۡا بِاَمۡوَالِهِمۡ وَاَنۡفُسِهِمۡ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ وَالَّذِيۡنَ اٰوَوۡا وَّنَصَرُوۡۤا اُولٰٓئِكَ بَعۡضُهُمۡ اَوۡلِيَآءُ بَعۡضٍ ؕ وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَلَمۡ يُهَاجِرُوۡا مَا لَـكُمۡ مِّنۡ وَّلَايَتِهِمۡ مِّنۡ شَىۡءٍ حَتّٰى يُهَاجِرُوۡا ۚ وَاِنِ اسۡتَنۡصَرُوۡكُمۡ فِى الدِّيۡنِ فَعَلَيۡكُمُ النَّصۡرُ اِلَّا عَلٰى قَوۡمٍ بَيۡنَكُمۡ وَبَيۡنَهُمۡ مِّيۡثَاقٌ ؕ وَاللّٰهُ بِمَا تَعۡمَلُوۡنَ بَصِيۡرٌ ۝۷۲ وَالَّذِيۡنَ كَفَرُوۡا بَعۡضُهُمۡ اَوۡلِيَآءُ بَعۡضٍ ؕ اِلَّا تَفۡعَلُوۡهُ تَكُنۡ فِتۡنَةٌ فِى الۡاَرۡضِ وَفَسَادٌ كَبِيۡرٌ ۝۷۳ وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَهَاجَرُوۡا وَجٰهَدُوۡا فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ وَالَّذِيۡنَ اٰوَوۡا وَّنَصَرُوۡۤا اُولٰٓئِكَ هُمُ الۡمُؤۡمِنُوۡنَ حَقًّا ؕ لَهُمۡ مَّغۡفِرَةٌ وَّرِزۡقٌ كَرِيۡمٌ ۝۷۴ وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا مِنۡۢ بَعۡدُ وَهَاجَرُوۡا وَجٰهَدُوۡا مَعَكُمۡ فَاُولٰٓئِكَ مِنۡكُمۡ ؕ وَاُولُوا الۡاَرۡحَامِ بَعۡضُهُمۡ اَوۡلٰى بِبَعۡضٍ فِىۡ كِتٰبِ اللّٰهِ ؕ اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَىۡءٍ عَلِيۡمٌ ۝۷۵

आयत 72

اِنَّ الَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَهَاجَرُوۡا وَجٰهَدُوۡا بِاَمۡوَالِهِمۡ وَاَنۡفُسِهِمۡ فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ وَالَّذِيۡنَ اٰوَوۡا وَّنَصَرُوۡۤا اُولٰٓئِكَ بَعۡضُهُمۡ اَوۡلِيَآءُ بَعۡضٍ ؕ

"यक़ीनन वह लोग जो ईमान लाये और जिन्होंने हिजरत की और जिहाद किया अपने मालों और अपनी जानों के साथ अल्लाह की राह में, और वह लोग जिन्होंने इन्हें पनाह दी और उनकी मदद की, यह सब लोग एक दूसरे के साथी हैं।"

उस वक़्त तक मुसलमान मआशरा दो अलैहदा-अलैहदा गिरोहों में मुन्क़सिम था, एक गिरोह मुहाजरीन का था और दूसरा अंसार का। अगरचे मुहाजरीन और अंसार को भाई-भाई बनाया जा चुका था, लेकिन इस तरह के ताल्लुक़ से पूरा क़बाइली निज़ाम एक दम तो तब्दील नहीं हो जाता। उस वक़्त तक सूरते हाल यह थी कि गज़वा-ए-बदर से पहले जो आठ मुहिम्मात हुज़ूर ﷺ ने मुख्तलिफ़ इलाक़ों में भेजीं उनमें आप ﷺ ने किसी अंसारी सहाबी रज़ि. को शरीक नहीं फ़रमाया। अंसार पहली दफ़ा गज़वा-ए-बदर में शरीक हुए। इस तारीख़ी हक़ीक़त को मद्दे नज़र रखा जाए तो यह नुक्ता वाज़ेह हो जाता है कि आयत के पहले हिस्से में मुहाजरीन का ज़िक्र हिजरत के अलावा जिहाद की तख़सीस के साथ क्यों हुआ है? यानि अन्सारे मदीना तो जिहाद में बाद में शामिल हुए, हिजरत के डेढ़ साल बाद तक तो जिहादी मुहिम्मात में हिस्सा सिर्फ़ मुहाजरीन ही लेते रहे थे। यहाँ अंसार की शान यह बताई गयी: {وَالَّذِيۡنَ اٰوَوۡا وَّنَصَرُوۡۤا} कि इन्होंने अपने दिलों और अपने घरों में मुहाजरीन के लिये जगह पैदा की और हर तरह से उनकी मदद की।

وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَلَمۡ يُهَاجِرُوۡا مَا لَـكُمۡ مِّنۡ وَّلَايَتِهِمۡ مِّنۡ شَىۡءٍ

"और वह लोग जो ईमान लाए लेकिन उन्होंने हिजरत नहीं की, तुम्हारा (अब) उनके साथ कोई ताल्लुक़ नहीं"

"हत्ता कि वह हिजरत करें।" حَتّٰى يُهَاجِرُوْا

सूरतुन्निसा में (जो इस सूरत के बाद नाज़िल हुई है) हिजरत ना करने वालों के बारे में वाज़ेह हुक्म (आयत 89, 90) में मौजूद है। वहाँ उन्हें मुनाफ़िक़ीन और कुफ्फ़ार जैसे सुलूक का मुस्तहिक़ क़रार दिया गया है कि उन्हें पकड़ो और क़त्ल करो इल्ला यह कि उनका ताल्लुक़ किसी ऐसे क़बीले से हो जिसके साथ तुम्हारा मुआहिदा हो।

आयत ज़ेरे नज़र में भी वाज़ेह तौर पर बता दिया गया है कि जिन लोगों ने हिजरत नहीं की उनके साथ तुम्हारा कोई रिश्ता-ए-विलायत व रफ़ाक़त नहीं है। यानि ईमाने हक़ीक़ी तो दिल का मामला है जिसकी कैफ़ियत सिर्फ़ अल्लाह जनता है, लेकिन क़ानूनी तक़ाज़ों के लिये ईमान का ज़ाहिरी मैयार हिजरत क़रार पाया। जिन लोगों ने ईमान लाने के बाद मक्का से मदीना हिजरत की, उन्होंने अपने ईमान का ज़ाहिरी सुबूत फ़राहम कर दिया, और जिन लोगों ने हिजरत नहीं की मगर ईमान के दावेदार रहे, उन्हें क़ानूनी तौर पर मुसलमान तस्लीम नहीं किया गया। मसलन बदर के क़ैदियों में से कोई शख्स अगर यह दावा करता है कि मैं तो ईमान ला चुका था, जंग में तो मजबूरन शामिल हुआ था, तो इसका जवाब इस उसूल के मुताबिक़ यही है कि चूँकि तुमने हिजरत नहीं की, लिहाज़ा तुम्हारा शुमार उन्हीं लोगों के साथ होगा जिनके साथ मिल कर तुम जंग करने आये थे। इस लिहाज़ से इस आयत का रुए सुखन भी असीराने बदर (बदर के क़ैदियों) की तरफ़ है।

उनमें से अगर कोई शख्स इस्लाम का दावेदार है तो वह क़ानून के मुताबिक़ फ़िदया देकर आज़ाद हो, वापस मक्का जाए, फिर वहाँ से बाक़ायदा हिजरत करके मदीना आ जाए तो उसे साहिबे ईमान तस्लीम किया जाएगा। फिर वह तुम्हारा हिमायती है और तुम उसके हिमायती होंगे।

"और अगर वह तुमसे दीन के मामले में मदद माँगें तो उनकी मदद करना तुम पर वाजिब है" وَاِنِ اسْتَنْصَرُوْكُمْ فِي الدِّيْنِ فَعَلَيْكُمُ النَّصْرُ

यानि वह लोग जो ईमान लाये लेकिन मक्के में ही रहे या अपने-अपने क़बीले में रहे और उन लोगों ने हिजरत नहीं की, अगर वह दीन के मामले में तुम लोगों से मदद माँगें तो तुम उनकी मदद करो।

"मगर किसी ऐसी क़ौम के ख़िलाफ़ (नहीं) कि उनके और तुम्हारे दरमियान मुआहिदा हो।" اِلَّا عَلٰى قَوْمٍ بَيْنَكُمْ وَبَيْنَهُمْ مِّيْثَاقٌ

अगरचे दारुल इस्लाम वालों पर उन मुसलमानों की हिमायत व मुदाफ़अत की ज़िम्मेदारी नहीं है जिन्होंने दारुल कुफ़्र से हिजरत नहीं की है, ताहम वह दीनी अख़ुवत के रिश्ते से खारिज़ नहीं हैं। चुनाँचे वह अगर अपने मुसलमान भाईयों से इस दीनी ताल्लुक़ की बिना पर मदद के तालिब हों तो उनकी मदद करना ज़रूरी है, बशर्ते कि यह मदद किसी ऐसे क़बीले के मुक़ाबले में ना माँगी जा रही हो जिससे मुसलमानों का मुआहिदा हो चुका है। मुआहिदे का अहतराम बरहाल मुक़द्दम है।

"और जो कुछ तुम कर रहे हो अल्लाह उसे देख रहा है।" وَاللّٰهُ بِمَا تَعْمَلُوْنَ بَصِيْرٌ

आयत 73

"और वह लोग जिन्होंने कुफ़्र किया वह आपस में एक-दूसरे के साथी हैं।" وَالَّذِيْنَ كَفَرُوْا بَعْضُهُمْ اَوْلِيَآءُ بَعْضٍ

अरब के क़बाइली मआशरे में बाहमी मुआहिदों और विलायत का मामला बहुत अहम होता था। ऐसे मुआहिदों की तमाम ज़िम्मेदारियों को बड़ी संजीदगी से निभाया जाता था। मसलन अगर किसी शख्स पर किसी क़िस्म का तावान (नुक़सान) पड़ जाता था तो उसके वली और हलीफ़ उसके तावान की रक़म पूरी करने के लिये पूरी ज़िम्मेदारी से अपना-अपना हिस्सा डालते थे। विलायत की अहमियत के पेशे नज़र इसकी शराइत और हुदूद वाज़ेह तौर पर बता दी गईं कि कुफ्फ़ार बाहम एक-दूसरे के हलीफ़ हैं, जबकि अहले ईमान का रिश्ता-ए-विलायत आपस में एक-दूसरे के साथ है। लेकिन वह मुसलमान जिन्होंने हिजरत नहीं की, उनका अहले ईमान के साथ विलायत का कोई रिश्ता नहीं। अलबत्ता अगर ऐसे मुसलमान मदद के तलबगार हों तो अहले ईमान ज़रूर उनकी मदद करें, बशर्ते कि यह मदद किसी ऐसे क़बीले के ख़िलाफ़ ना हो जिनका मुसलमानों के साथ मुआहिदा हो चुका है।

اِلَّا تَفۡعَلُوۡهُ تَكُنۡ فِتۡنَةٌ فِى الۡاَرۡضِ وَفَسَادٌ كَبِيۡرٌ ۝

"अगर तुम यह (इन क़वाइद व ज़वाबित की पाबंदी) नहीं करोगे तो ज़मीन में फ़ितना फैलेगा और बहुत बड़ा फ़साद बरपा हो जायेगा।"

तुम लोगों का हर काम क़वाइद व ज़वाबित के मुताबिक़ होना चाहिये। फ़र्ज़ करें कि मक्का में एक मुसलमान है, वह मदीने के मुसलमानों को ख़त लिखता है कि मुझे यहाँ सख्त अज़ियत पहुँचाई जा रही है, आप लोग मेरी मदद करें। दूसरी तरफ़ उसके क़बीले का मुसलमानों के साथ सुलह और अमन मुआहिदा है। अब यह नहीं हो सकता कि मुसलमान अपने उस भाई की मदद के लिये उसके क़बीले पर चढ़ दौड़ें, क्योंकि अल्लाह तआला किसी भी क़िस्म की वादा खिलाफ़ी और नाइन्साफ़ी को पसंद नहीं करता। उस मुसलमान को दूसरे तमाम मुसलमानों की तरह हिजरत करके दारुल इस्लाम पहुँचना चाहिये और अगर वह हिजरत नहीं कर सकता तो फिर वहाँ जैसे भी हालात हों उसे चाहिये कि उन्हें बरदाश्त करे। चुनाँचे वाज़ेह अंदाज़ में फ़रमा दिया गया कि अगर तुम इन मामलात में क़वानीन व ज़वाबित की पासदारी नहीं करोगे तो ज़मीन में फ़ितना व फ़साद बरपा हो जाएगा। अब वह आयत आ रही है जिसका ज़िक्र सूरह के आग़ाज़ में परकार (compass) की तशबीह के हवाले से हुआ था।

आयत 74

وَالَّذِيۡنَ اٰمَنُوۡا وَهَاجَرُوۡا وَجٰهَدُوۡا فِىۡ سَبِيۡلِ اللّٰهِ وَالَّذِيۡنَ اٰوَوۡا وَّنَصَرُوۡۤا

"और वह लोग जो ईमान लाये और जिन्होंने हिजरत की और जिहाद किया अल्लाह की राह में (यानि मुहाजरीन) और वह लोग (अंसारे मदीना) जिन्होंने उन्हें पनाह दी और उनकी नुसरत की"

اُولٰٓئِكَ هُمُ الۡمُؤۡمِنُوۡنَ حَقًّا ؕ لَهُمۡ مَّغۡفِرَةٌ وَّرِزۡقٌ كَرِيۡمٌ ۝

"यही लोग हैं सच्चे मोमिन। उनके लिये है मगफ़िरत और रिज़्क़े करीम।"

यहाँ पर मुहाजरीन और अंसार के उन दोनों गिरोहों का इकट्ठे ज़िक्र करके उन मोमिनीन सादिक़ीन की ख़ुसूसियात के हवाले से एक हक़ीक़ी मोमिन की तारीफ़ (definition) के दूसरे रुख की झलक दिखाई गयी है, जबकि इसके पहले हिस्से या रुख के बारे में हम इसी सूरत की आयत 2 और 3 में पढ़ आये हैं। लिहाज़ा आगे बढ़ने से पहले मज़कूरा आयात के मज़मून को एक दफ़ा फिर ज़हन में ताज़ा कर लीजिये।

इस तफ़सील का ख़ुलासा यह है कि इस्लाम की बुनियाद पाँच चीज़ों पर है (بُنِیَ الۡاِسۡلَامُ عَلٰی خَمۡسٍ.....), यानि कलमा-ए-शहादत, नमाज़, रोज़ा, हज और ज़कात। यह पाँच अरकान मुसलमान होने के लिये ज़रूरी हैं, लेकिन हक़ीक़ी मोमिन होने के लिये इनमें दो चीज़ों का मज़ीद इज़ाफ़ा होगा, जिनका ज़िक्र हमें सूरतुल हुजरात की आयत 15 में मिलता है:

"यक़ीने क़ल्बी" और "जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह।" यानि ईमान में ज़बान की शहादत के साथ "यक़ीने क़ल्बी" का इज़ाफ़ा होगा और आमाल में नमाज़, रोज़ा, हज और ज़कात के साथ "जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह" का। गोया यह सात चीज़ें या सात शर्तें पूरी होंगी तो एक शख्स बंदा-ए-मोमिन कहलायेगा। उस बंदा-ए-मोमिन की शख्सियत का जो नक़्शा इस सूरत की आयत 2 और 3 में दिया गया है उसके मुताबिक़ उसके दिल में यक़ीन वाला ईमान है, अल्लाह की याद से उसका दिल लरज़ उठता है, आयाते क़ुरानी पढ़ता है या सुनता है तो दिल में ईमान बढ़ जाता है। वह हर मामले में अल्लाह की ज़ात पर पूरा भरोसा रखता है, नमाज़ क़ायम करता है, ज़कात अदा करता है और अपना माल अल्लाह की राह में खर्च करता है। इन खुसूसियात के साथ {أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا} की मुहर लगा दी गयी और इस मुहर के साथ वहाँ पर (आयत 4) मोमिन की शख्सियत का एक रुख या एक सफ़हा मुकम्मल हो गया।

अब बंदा-ए-मोमिन की शख्सियत का दूसरा सफ़हा या रुख आयत ज़ेरे नज़र में यूँ बयान हुआ है कि जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह लाज़मी शर्त के तौर पर इसमें शामिल कर दिया गया और फिर इस पर भी वही मुहर सब्त की गयी है: {أُولَٰئِكَ هُمُ الْمُؤْمِنُونَ حَقًّا} चुनाँचे यह दोनों रुख मिल कर बंदा-ए-मोमिन की तस्वीर मुकम्मल हो गयी। एक शख्सियत की तस्वीर के यह दो रुख ऐसे हैं जिनको अलग-अलग नहीं किया जा सकता। ये दो सफ़हे हैं जिनसे मिल कर एक वरक़ बनता है। सहाबा किराम रज़ि. की शख्सियतों के अंदर ये दोनों रुख एक साथ पाए जाते थे, लेकिन जैसे-जैसे उम्मत ज़वाल पज़ीर हुई, बंदा-ए-मोमिन की शख्सियत की खुसूसियात के भी हिस्से बखरे कर दिए गए। बक़ौले अल्लामा इक़बाल:

उडाये कुछ वरक़ लाले ने, कुछ नरगिस ने, कुछ गुल ने
चमन में हर तरफ़ बिखरी हुई है दास्ताँ मेरी

आज मुसलमानों की मज्मुई हालत यह है कि अगर कुछ हल्क़े ज़िक्र के लिए मखसूस हैं तो उनको जिहाद और फ़लसफ़ा-ए-जिहाद से कोई सरोकार नहीं। दूसरी तरफ़ जिहादी तहरिकें हैं तो उनको रूहानी कैफ़ियात से शनासाई नहीं। लिहाज़ा आज उम्मत के दुखों के मदावा (ईलाज) करने के लिये ऐसे अहले ईमान की ज़रूरत है जिनकी शख्सियात में यह दोनों रंग इकट्ठे एक साथ जलवागर हों। जब तक मोमिनीन सादिक़ीन की ऐसी शख्सियात वजूद में नहीं आएँगी, जिनमें सहाबा किराम रज़ि. की तरह दोनों पहलुओं में तवाज़ुन हो, उस वक़्त तक मुसलमान उम्मत की बिगड़ी तक़दीर नहीं संवर सकती। अगरचे सहाबा किराम रज़ि. जैसी कैफ़ियात का पैदा होना तो आज नामुम्किनात में से है, लेकिन किसी ना किसी हद तक उन हस्तियों का अक्स अपनी शख्सियात में पैदा करने और एक ही शख्सियत के अंदर इन दोनों खुसूसियात का कुछ ना कुछ तवाज़ुन पैदा करने की कोशिश तो की जा सकती है। मसलन इनमें से एक कैफ़ियत एक शख्सियत के अंदर 25 फ़ीसद हो और दूसरी कैफ़ियत भी 25 फ़ीसद के लगभग हो तो क़ाबिले क़ुबूल है। और अगर ऐसा हो कि रूहानी कैफ़ियत तो 70 फ़ीसद हो मगर जिहाद फ़ी सबीलिल्लाह का जज़्बा सिफ़र है या जिहाद का जज़्बा तो 80 फ़ीसद है मगर रूहानियत कहीं ढूंढे से भी नहीं मिलती तो ऐसी शख्सियत नज़रियाती लिहाज़ से गैर मुतवाज़न होगी। बरहाल एक बंदा-ए-मोमिन की शख्सियत की तकमील के लिये ये दोनों रुख नागुज़ीर हैं। इनको इकठ्ठा करने और एक शख्सियत में तवाज़ुन के साथ जमा करने की आज के दौर में सख्त ज़रूरत है।

आयत 75

وَالَّذِينَ آمَنُوا مِن بَعْدُ وَهَاجَرُوا وَجَاهَدُوا مَعَكُمْ فَأُولَٰئِكَ مِنكُمْ ۚ

"और जो लोग बाद में ईमान लाए और उन्होंने हिजरत की और तुम्हारे साथ मिल कर जिहाद किया, तो (ऐ मुसलमानों!) वह तुम में से ही हैं।"

वह तुम्हारी जमात, इसी उम्मत और हिज़बुल्लाह का हिस्सा है।

“और रहमी रिश्तेदार अल्लाह के क़ानून में एक-दूसरे के ज़्यादा हक़दार हैं।”	وَاُولُوا الۡاَرۡحَامِ بَعۡضُهُمۡ اَوۡلٰى بِبَعۡضٍ فِىۡ كِتٰبِ اللّٰهِ‌ؕ

यानि शरीअत के क़वानीन में ख़ून के रिश्ते मुक़द्दम रखे गए हैं। मसलन विरासत का क़ानून ख़ून के रिश्तों को बुनियाद बना कर तरतीब दिया गया है। इसी तरह शरीअत के तमाम क़वाइद व ज़वाबित में रहमी रिश्तों की अपनी एक तरजीही हैसियत है। ख़ूनी रिश्तों के इन क़ानूनी तरजीहात को भाई-चारे और विलायत के ताल्लुक़ात के साथ गड-मद ना किया जाए।

“यक़ीनन अल्लाह हर चीज़ का इल्म रखता है।”	اِنَّ اللّٰهَ بِكُلِّ شَىۡءٍ عَلِيۡمٌ‏ ۝

بارک اللہ لی و لکم فی القرآن العظیم و نفعنی و ایا کم بالآیات والذکر الحکیم۔

बारक अल्लाहु ली व लकुम फ़िल क़ुरानुल अज़ीम, व नफ़ाअनी, व इय्याकुम बिल्आयाति वल् ज़िकरुल हकीम!!

❀ ❀ ❀